साहित्य साधना सदनकी प्रथम स्तम्भ

जिन-पूजन संग्रह

—:*०*—

सञ्चयिता व सम्पादक—
विनयकुमार 'चौधरी' साहित्य-रत्न
सा० शास्त्री, काव्यतीर्थ

—:०:—

— प्रकाशक —

चौधरी मथुरा प्रसाद जैन

स्थान--बड़ा गांव, पो० बुडेरा

(टीकमगढ़ वि० प्र०)

—(:०:)—

प्रथमवार	दीप मालिका	मूल्य
५००	वीर० नि० २४७७	सवा रुपया १)

मुद्रक—चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस, नया बाज़ार, दिल्ली ।

स्मरण

जिन के शत-शत उपकारों की याद कभी नहीं भूल सकती, जिनकी धार्मिकता एवं सहृदयता आज भी मेरे हृदय में साकार रूप लिये हुये विराजमान है एवं जिन्होंने अपने पवित्र स्नेह की धारा मेरे हृदय में प्रवाहित की, उन स्वर्गीय पूज्य पिता **चौ० रघुनाथ प्रसाद जी** की पवित्र श्रद्धा भरी याद में—

मथुरा प्रसाद जैन

आमुख

—:○:—

देवपूजा गुरूपास्ति स्वाध्यायः संयमस्तपः।
दानं चेति गृहस्थानां षट्कर्माणि दिने दिने ॥

देवपूजा, गुरुउपासना, स्वाध्याय, संयम तप और दान—गृहस्थको ये षट्कर्म—छः कर्तव्य कार्य प्रतिदिन करनेको वतलाये गये हैं। इन छः कर्तव्योंकी ओर यदि हम गहरी दृष्टि डालें तो कहना पड़ेगा कि इनके अतिरिक्त गृहस्थके लिए कोई कर्तव्य रह ही नहीं जाता। पूरे नागरिक शास्त्रकी शिक्षाएं, धार्मिक शास्त्रोंके उपदेश इसी उपदेशवाक्यमें गर्भित हो जाते हैं।

प्रस्तुत उपदेश वाक्यके प्रणेताने सबसे प्रथम देवपूजनको ही ग्रहण किया है। यह इसलिये कि यही सबका आधारभूत है। देव वचनोंसे ही सम्यग्गुरुकी पहचान होती है; 'स्व' का ज्ञान भी देव-पूजासे ही अपेक्षित है। 'स्व' की जिन्होंने पूर्णरूपसे उपलब्धि करली है, ऐसे देवरूप आदर्शमें ही तो हम अपने 'स्व' का प्रतिविम्ब देख सकते हैं। फिर संयम, तप और दानकी परिणति देव-पूजा से ही होती है। इस तरह देवपूजाकी प्रधानता अपना औचित्य रखती है।

देव-पूजासे तात्पर्य यह कि परमात्माका गुण-स्तवन करना, भक्ति करना उसमें अपनी श्रद्धाको दृढ़ रखना, आदर और भक्तिसे उस आप्त—परमात्माको नमस्कार-वन्दन करना और उसके गुणों की प्राप्तिकी कामना करना — आदि आदि।

वह पूजन पूजन नहीं होगी जिसमें भक्तिकी रसधारा

प्रवाहित न हो, भावोंमें सरसता न हो, पूज्य प्रभुके प्रति अगाढ़ श्रद्धा न हो, उसके गुणोंके प्रति आकर्षण न हो, और बिना किसी लौकिक आकांक्षाके उस प्रभुका अवलोकन कर जिसमें हृदय की कलियां खिल न उठें। वह तो होगा केवल दम्भ और भूठा लोक दिखावा—भाव हीनकी क्रियायें सदैव निष्फल रहती हैं। अतएव भावहीन पूजासे कोई लाभ नहीं। भक्ति हमारे हृदयका वह सागर है जो प्रभुका आलम्बन पा उद्वेल्लित हो उठता है वही भक्ति सागरका रस हमारी भावनाओंको आर्द्र बना देता है जिससे वे सरस भावनाएं शुभ कार्योंकी ओर परिणत होती हैं तब परिणामों में एक प्रकार की नमी और ऋजुता आ जाती है फल स्वरूप पूज्यके गुणोंकी उपलब्धि अति सुलभ बन जाती है।

अब प्रश्न रह जाता है पूज्य कौन है! इसका खासा समाधान तो यही है कि 'यो हि यद्गुणलब्ध्यर्थी स तं वन्द्यमानो दृष्ट.' जो जिसके गुणोंकी चाह करता है वह उसके लिए पूज्य है—वन्दनीय है, स्तुत्य है वैसे तो—

'अनपेक्षितार्थवृत्तिः कः पुरुषः सेवते नृपतीन्' की नीति सर्वत्र ही लागू है। चूंकि हम परमात्माके गुणोंकी कामना करते हैं इसलिए परमात्मा हमारे लिए पूज्य है, वन्दनीय एवं स्तुत्य हैं—हमें दृढ़ विश्वास है कि अपने वन्दनीय देवकी वन्दना-स्तुतिसे उसके गुणोंकी प्राप्ति हमें अवश्य होगी; आत्माके जिन अनन्त गुणोंका वह भोग कर रहा है, वे गुण हमें उसकी उपासनासे अवश्य उपलब्ध होंगे अतः हम उसकी वन्दना-स्तुति-पूजन-भक्ति करते हैं—

'श्रेयोमार्गस्य संसिद्धिः प्रसादात्परमेष्ठिनः'

अर्थात्—कल्याण-मार्गकी प्राप्ति परमेष्ठी भगवानके प्रसादसे

निश्चित ही प्राप्त होती है।

अब रह जाता है परमात्माका स्वरूप सो—

वह परमात्मा जैन तत्वकी दृष्टिसे आत्माके पूर्ण विकासकी अवस्थाका नाम है। अनादिकालसे यह आत्मा कर्ममलसे दूषित होकर तीनों लोकोंमें संसरण करता है और आत्मतत्त्वसे अपरिचित रह कर नाना तरहके संसरण जन्य दुख भोगता है; जीवकी इस अवस्थाका नाम 'जीवात्मा' या बहिरात्मा है। परन्तु जब वही जीव-अपने भीतर सदैव जागृत रहने वाले, परन्तु कर्मावरणसे आवृत अपने आत्मतत्त्वसे परिचित होने लगता है तो कर्मोंके आवरणको दूर करनेका प्रयत्न करता है इस प्रयत्न करनेकी अवस्था का नाम 'अन्तरात्मा' है। जब कर्मोंका पर्दा धीरे धीरे झीना-झीना होकर बिल्कुल नष्ट हो जाता है उस समय आत्माकी अनन्त अप्रकट शक्तियां पूर्णतया प्रकट होकर दमकने लगती हैं—इसी आत्यन्तिक विशुद्ध अवस्थाका नाम 'परमात्मा' है, जिसे हम परमेष्ठी सर्वज्ञ, जिन, अर्हन्, आप्त आदि नामोंसे पुकारते हैं।

इस तरह जब आत्माकी पूर्ण विकसित अवस्थाका नाम परमात्मा है तो किसको यह अभिप्रेत नही कि वह भी अधूरा न रहे—पूर्ण बन जावे—परमात्मा बनजावे—अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त वीर्य और अनन्त सुखस्वरूप निज वृत्तिका पूर्णानुभवन करे।

यह बात अनुभव गम्य है कि परमात्मपदकी प्राप्तिके लिये परमात्माका ध्यान, परमात्माके गुणोंका स्मरण, चिन्तन और उसके अलौकिक चरित्रके स्वरूपका विचार करना परमावश्यक है; क्योंकि वह ध्यान, चिन्तवन, स्मरण हमको अपनी आत्माकी स्मृति दिलाता है—हमें आत्मतत्वसे परिचित होनेमें सहायता करता है तब अपनी अवस्थाका बोध होकर 'कोऽहं को मम धर्मः किं करणीयं

स्वात्मलब्धये' का विकल्प मात्र सामने रह जाता है और हल भी दूर नहीं दिखाई देता—

मोक्षमार्गस्य नेत्तारं भेत्तारं कर्मभूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वाना वन्दे तद्गुणलब्धये ॥

पूज्यपाद स्वामीके इस मंगलाचरणात्मक श्लोकसे मिल जाता है, जिसमें उन्होंने हितोपदेशी, वीतराग और सर्वज्ञदेवको उसके गुणोंकी प्राप्तिके लिये नमस्कार करनेकी प्रतिज्ञा की है। वास्तवमें उसके गुणोंकी प्राप्ति अपने गुणोंकी प्राप्ति ही है; क्योंकि विश्वकी अनन्तानन्त आत्माएँ ज्ञान—दर्शनादि गुण विशिष्ट निजरूपसे समान हैं। प्रथक्त्व तो परपुद्गल जनित है, जो निजका तत्त्व नहीं किन्तु आत्म तत्त्वके प्रकाशमें केवल बाधक ही है—जब विश्वकी सब आत्माएँ समान हैं तो उनके अन्दर विद्यमान अनन्त चतुष्टय रूप शक्तियां भी समान हैं। और जिन विशुद्ध गुणोंकी उपलब्धि परमात्मामें हम पा रहे हैं वे गुण हममें भी होने चाहिये। उनकी प्राप्तिके लिये ही भगवान् परमात्माको एक आदर्शरूप मान करके उसे हम नमस्कार—वन्दना करते हैं। जिस तरह एक दर्पणमें हम अपना मुख ज्यों का त्यों देख लेते हैं—परमात्मारूप दर्पणमें हम अपने अन्दर छुपे रहने वाले अनन्त गुणोंको देखनेके लिये समर्थ होते हैं। दर्पणके उपकारके समान ही भगवान् हमारे उपकारक हैं। वैसे तो वे वीतरागी होनेके कारण न किसीका अहित करते हैं और न हित ही करते हैं। न वे भक्तपर प्रसन्नता प्रकट करते हैं और न स्वप्रतिकूल जनपर द्वेष ही प्रकट करते हैं।

न पूजयार्थस्त्वयि वीतरागे न निन्दया नाथ विवान्तवैरे ।
तथापि ते पुण्य गुणस्मृतिर्नः पुनाति चित्तं दुरिताञ्जनेभ्यः ॥

भगवान् वीतरागी हैं—रागका एक अंश भी उनकी आत्मामें

विद्यमान नहीं है अतएव रागका अभाव होनेके कारण द्वेषका भी लेष उनके नहीं है क्योंकि द्वेषको उत्पन्न करने वाला राग ही है— इष्टमें रहने वाला राग अनिष्टमें द्वेष उत्पन्न कर देता है। इसलिए इष्टमें रागके अभावसे अनिष्टमें द्वेषका अभाव निश्चित है— राग-द्वेषसे रहित भगवान ! आपको न तो कोई पूजन अर्चनसे मतलब है और न निन्दा गर्हा से कोई क्षोभ है, तो भी हे भगवान ! आपके पुण्य गुणोंकी स्मृति—अथच स्वात्म गुणोंकी आपसे होने वाली स्मृति—मानव हृदयोंको पापोंसे बचाकर पवित्र करती है।

तात्पर्य कि भगवानके अर्चन-वन्दन-स्तवनादिसे भगवद्‌गुणों की प्राप्ति होती है जो कि हमें अभिप्रेत हैं अतएव उनकी पूजन, वन्दन, स्तुति करना हमें लाजिमी है। जिस तरह मयूरकी सामी-प्यतासे चन्दन वृक्षोंके भुजङ्ग बन्धन स्वयं ढीले पड़ जाते हैं, ठीक उसी तरह भगवानको सभक्ति हृदयमें धारण करनेसे उनके गुणोंका स्मरण-चिन्तन करनेसे हम प्राणियोंके कर्म बन्धन अपने आप शिथिल पड जाते हैं। यही उनके स्तवन, अर्चन, गुण-चिन्तन का फल है—

हृद्वर्तिनि त्वयि विभो ! शिथिली भवन्ति
जन्तो क्षणेन निबिडा अपि कर्मबन्धाः ।
सद्यो भुजङ्गममया इव मध्यभाग-
मभ्यागते वन शिखण्डिनि चन्दनस्य ॥

—कल्याणमन्दिर-स्तवन

भगवत्पूजनसे कर्मबन्धन तो दूर होता ही है, लौकिक ऐश्वर्य सम्पदाकी प्राप्ति भी उससे मिल जाती है जिस तरहसे एक किसान को अपनी खेतीसे धान्य प्राप्तिके साथ २ भूसेकी प्राप्ति हो जाती हैं। परन्तु इससे हम यह सोचे कि भगवान हमसे प्रसन्न होकर हमें

उनके लाभ के लिये आशीर्वाद देते होंगे तब तो बात गलत रहेगी, कारण कि वे तो वीतरागी है, प्रसन्न होना तो वीतरागतामें बाधक है। लाभका कारण तो केवल यह है कि परमात्माके गुणानुराग से, उनकी भक्ति, ध्यान, चिन्तवन दर्शनसे उनकी वीतरागमयी मूर्तिका प्रतिबिम्ब हमारी आत्मापर पड़ता है और उनकी सी शान्तिका सञ्चार हमारी आत्मामें भी होने लगता है, तब शुभ परिणामोंकी वृद्धि होती है। इस तरह हमारी पुण्य प्रकृतियोंका रस बढ़ने लगता है और पाप प्रकृतियोंका रस सूखने लगता है चूंकि अन्तराय कर्मकी प्रकृतियां भी पापरूप हैं इसलिए वे भी सूखने लगती है, भग्न रस होकर वे पापप्रकृतियां हमारे लाभ, भोग उपभोग और वीर्यको बाधा देनेकी सामर्थ्य नहीं रख पातीं अतएव हमें ऐहिक पदार्थोंकी प्राप्ति हो जाती है—

नेष्टं विहन्तुं शुभभावभग्न रसप्रकर्षः प्रभुरन्तरायः।
तत्कामचारेण गुणानुरागनुत्यादि रिष्टार्थकदार्हदादेः॥

इस तरह भगवत्पूजन, स्तुति वन्दनादिसे हमें अपने आत्म-गुणोंकी प्राप्ति और ऐहिक सुखोंकी उपलब्धि भी अप्रत्यक्ष रूपसे मिल जाती है इसीलिए गृहस्थ के ६ कर्तव्योंमें देव पूजनको प्रधानता दी गई है। यदि हम अपनी आत्म चेतनाको जागृत करना चाहते हैं तो हमें आवश्यक है कि हम भक्तिभाव-पूर्वक अपने इष्ट देवकी अर्चना, वन्दना करें।

आजकल अष्ट द्रव्य चढ़ानेको ही जिन पूजनकी प्रथा सी है पर स्तुति, वन्दना नमस्कार, आदि बिना द्रव्य चढाये भी पूजन कहला सकते हैं। प्रचलित पूजन पद्धतिमें भगवानके मन्दिरमें भी स्थापना और बिसर्जन आदि क्रियायें विचारणीय हैं, जिनका उत्तर विद्वान् लोग देंगे।

—विजय कुमार चौधरी

जिन-पूजन-संग्रह

ॐ जय जय जय । ॐ नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ।
णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥

मन्त्रं संसारसारं त्रिजगदनुपमं सर्वपापारिमन्त्रम्,
संसारोच्छेदमन्त्रं विषमविषहरं कर्मनिर्मूलमन्त्रम् ।
मन्त्रं सिद्धिप्रदानं शिवसुखजननं केवलज्ञानमन्त्रम्
मन्त्रं श्रीजैनमन्त्रं जप जप जपितं जन्मनिर्वाणमन्त्रम् ॥२॥

आकृष्टिं सुरसम्पदां विदधते मुक्तिश्रियोवश्यता-
मुच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां विद्वेषमात्मैनसाम् ।
स्तम्भं दुर्गमनं प्रति प्रयततो मोहस्य सम्मोहनम्,
पायात्पञ्चनमस्क्रियाक्षरमयी साराधना देवता ॥३॥

अनन्तानन्तसंसारसन्ततिच्छेदकारणम् ।
जिनराजपदाम्भोजस्मरणं शरणं मम ॥४॥

दर्शनं देव-देवस्य दर्शनं पापनाशनम् ।
दर्शनं स्वर्गसोपानं दर्शनं मोक्षसाधनम् ॥५॥

दर्शनेन जिनेन्द्राणां साधूनां वन्दनेन च ।

न चिरं तिष्ठते पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम् ॥६॥

वीतरागमुखं दृष्ट्वा, पद्मरागसमप्रभम् ।

अनेकजन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति ॥७॥

दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसारध्वान्तनाशनम् ।

बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थप्रकाशनम् ॥८॥

दर्शनं जिनचन्द्रस्य, सद्धर्मामृतवर्षणम् ।

जन्मदाहविनाशाय वर्धनं सुखवारिधेः ॥९॥

जीवादितत्त्वप्रतिपादकाय, सम्यक्त्वमुख्याष्टगुणाश्रयाय ।

प्रशान्तरूपाय दिगम्बराय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥१०॥

चिदानन्दैकरूपाय जिनाय परमात्मने ।

परमात्मप्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥११॥

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम ।

तस्मात्कारुण्यभावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥१२॥

नहि त्राता नहि त्राता, नहि त्राता जगत्त्रये ।

वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥१३॥

जिने भक्तिर्जिने भक्ति, र्जिने भक्तिर्दिने दिने ।

सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु, सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥१४॥

जिनधर्मविनिर्मुक्तो, मामवच्चक्रवर्त्यपि ।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि, जिनधर्मानुवासितः ॥१५॥

जन्मजन्मकृतं पापं, जन्मकोटिमुपार्जितम् ।
जन्ममृत्युजरारोगं, हन्यते जिनदर्शनात् ॥१६॥

अद्याभवत्सफलता नयनद्वयस्य,
देव त्वदीयचरणाम्बुजवीक्षणेन ।
अद्य त्रिलोकतिलक प्रतिभासते मे ।
संसारवारिधिरयं चुलकप्रमाणम् ॥१७॥

चत्तारि मंगलं—अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं ॥१॥

चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा ॥२॥

चत्तारि शरणं पव्वज्जामि—अरहंते सरणं पव्वज्जामि सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहूसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ॥३॥

वृषभ- अजित- संभव- अभिनन्दन-सुमति- पद्मप्रभ - सुपार्श्व- चन्द्रप्रभ- पुष्पदन्त- शीतल- श्रेयान्- वासुपूज्य - विमल - अनन्त - धर्म - शान्ति - कुन्थु - अर - मल्लि - मुनिसुव्रत - नमि - नेमि - पार्श्व - वर्धमानाख्येति

(वीर, महावीर, सन्मति, अतिवीर) वर्तमानकाल सम्बन्धिचतुर्विंशतीर्थकरेभ्यो नमोनमः ॥

सुप्रभातस्तोत्रम् ।

यत्स्वर्गावतरोत्सवे यदभवज्जन्माभिषेकोत्सवे,
यद्दीक्षाग्रहणोत्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे ।
यन्निर्वाणगमोत्सवे जिनपतेः पूजाद्भुतं तद्भवै-
संगीतस्तुतिमंगलैः प्रसरतां मे सुप्रभातोत्सवः ॥१॥

श्रीमन्नतामरकिरीटमणिप्रभाभि
राजीढपाद युग ! दुर्धरकर्मदूर ।
श्रीनाभिनन्दन ! जिनाजितशंम्भवाख्य !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥२॥

छत्रत्रयप्रचलचामरवीज्यमान
देवाभिनन्दनमुने सुमते जिनेन्द्र ।
पद्मप्रभारुणमणिद्युतिभासुराङ्ग
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥३॥

अर्हन् सुपार्श्व कदलीदलवर्णगात्र
प्रालेयतारगिरिमौक्तिकवर्णगौरम् ।

चन्द्रप्रभस्फटिकपाण्डुरपुष्पदन्त !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं सुप्रभातम् ॥४॥
संतप्तकांचनरुचे जिनशीतलाख्य !
श्रेयान्विनष्टदुरिताष्टकलङ्कपङ्क
बन्धूकबन्धुररुचे जिनवासुपूज्य !
त्वद्ध्यानतोऽस्तुसततं मम सुप्रभातम् ॥५॥
उद्दण्डदर्पकरिपोविमलामलाङ्ग
स्थेमन्ननन्तजिदनन्तसुखाम्बुराशे ।
दुष्कर्मकल्मषविवर्जितधर्मनाथ
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥६॥
देवामरीकुसुमसन्निभशान्तिनाथ !
कुन्थोदयागुणविभूषणभूषितांग !
देवाधिदेव भगवन्नरतीर्थनाथ, ।
त्वद्ध्यानतोऽस्तुसततं मम सुप्रभातम् ॥७॥
यन्मोहमल्लमदभंजनमल्लिनाथ !
क्षेमंकरावितथशासनसुव्रताख्य !
यत्सम्पदाप्रशमितो नमिनामधेय
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥८॥
तापिच्छगुच्छरुचिरोज्ज्वलनेमिनाथ
घोरोपसर्गविजयिन् जिनपार्श्वनाथ ।

स्याद्वादसूक्तिमणिदर्पण वर्द्धमान
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥९॥

आलेयनीलहरितारुणपीतभासम्
यन्मूर्तिमव्ययसुखावसथं मुनीन्द्राः ।
ध्यायन्ति सप्तति शतं जिनवल्लभानां
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥१०॥

सुप्रभातं सुनक्षत्रं मांगल्यं परिकीर्तितम् ।
चतुर्विंशतितीर्थानां सुप्रभातं दिनेदिने ॥११॥

सुप्रभातं सुनक्षत्रं श्रेयः प्रत्यभिनंदितम् ।
देवता ऋषयः सिद्धाः, सुप्रभातं दिने दिने ॥१२॥

सुप्रभातं तवैकस्य वृषभस्य महात्मनः ।
येन प्रवर्तितं तीर्थं भव्यसत्वसुखावहम् ॥१३॥

सुप्रभातं जिनेन्द्राणां ज्ञानोन्मीलितचक्षुषाम् ।
अज्ञानतिमिरान्धानां नित्यमस्तमितो रविः ॥१४॥

सुप्रभातं जिनेन्द्रस्य वीरः कमललोचनः ।
येनकर्माटवी दग्धा शुक्लध्यानोग्रवह्निना ॥१५॥

सुप्रभातं सुनक्षत्रं सुकल्याणं सुमङ्गलम् ।
त्रैलोक्यहितकर्तृणां जिनानामेव शासनम् ॥१६॥

मंगलाष्टकम्

श्रीमन्नम्रसुरासुरेन्द्रमुकुटप्रद्योतरत्नप्रभा-

भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः ।

ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,

स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्च गुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥१॥

सम्यग्दर्शनबोधवृत्तममलं रत्नत्रयं पावनम्,

मुक्तिश्रीनगराधिनाथजिनपत्युक्तोपवर्गप्रदः ।

धर्मः सूक्तिसुधाच चैत्यमखिलं चैत्यालयश्र्यालयम्,

प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥२॥

नाभेयादिजिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशति

श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश ।

ये विष्णुप्रतिविष्णुलाङ्गलधराः सप्तोत्तराः विंशति-

स्त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषा कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥३॥

देव्यष्टौच जयादिका द्विगुणिता विद्यादिका देवताः

श्रीतीर्थङ्करमातृकाश्च जनका यक्षाश्च यक्ष्यस्तथा ।

द्वात्रिंशत्त्रिदशाधिपास्तिथिसुरा दिक्कन्यकाश्चाष्टधा,

दिक्पाला दशचैत्यमी सुरगणाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥४॥

ये सर्वौषधिऋद्धयः सुतपसो वृद्धिङ्गताः पञ्च ये
ये चाष्टांङ्गमहानिमित्तकुशला येष्टाविधाश्चारणाः ।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोपि बलिनो ये वुद्धिऋद्धीश्वराः
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥५॥
कैलासो वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरी
चम्पा वा वसुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेदशैलोऽर्हताम् ।
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥६॥
ज्योतिर्व्यन्तरभावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा
जम्बूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा वक्षाररूप्याद्रिषु ।
इष्वाकारगिरौ च कुंडलनगे द्वीपेच नन्दीश्वरे
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥७॥
यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक् ।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा संभावितः स्वर्गिभिः
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥८॥

सर्पो हारलता भवत्यसिलता सत्पुष्पदामायते,
सम्पद्येत रसायनं विषमपि प्रीतिं विधत्ते रिपुः ।
देवा यान्ति वशं प्रसन्नमनसः किंवा बहु ब्रूमहे,

धर्मादेव नभोऽपि वर्षति नगैः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥९॥

आकाशं मूर्त्यभावादघकुलदहनादग्निरुर्वीक्षमाप्त्या
नैःसंगाद्वायुरापः-प्रशमगुणतया, स्वात्मनिष्ठैःसुयज्वा ।
सोमः सोमत्वयोगाद्रविरिति च विदुस्तेजसः सन्निधानात्
विश्वात्मा विश्वचक्षुर्वितरतु भवतां मङ्गलं श्रीजिनेन्द्रः॥ १०॥

इत्थं श्रीजिनमङ्गलाष्टकमिदं सौभाग्यसम्पत्करम्
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणां मुखाः ।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैः धर्मार्थकामान्विताः
लक्ष्मीराश्रयते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि ॥९॥

लघु अभिषेक पाठः

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं
स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम् ।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतु-
र्जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाभ्यधायि ॥१॥

श्रीमन्मन्दिरसुन्दरे शुचिजलैर्धौतैः सदर्भाक्षतैः
पीठे मुक्तिवरं निधाय रचितं त्वत्पादपद्मस्रजः ।
इन्द्रोऽहं निजभूषणार्थकमिदं यज्ञोपवीतं दधे
मुद्राकङ्कणशेखरान्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे ॥२॥

(श्रीमज्जिनाभिषेचनसमये यज्ञोपवीतं धारयामि)

सौगन्ध्यसङ्गतमधुव्रतझङ्कृतेन
संवर्ण्यमानमिव गन्धमनिन्द्यमादौ ।
आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्दवन्द्य–
पदारविन्दमभिवन्द्य जिनोत्तमानाम् ॥३॥

(श्रीमज्जिनाभिषेचनसमये स्वकीयाङ्गे तिलकवृन्दं धारयामि)

ये सन्ति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता
नागाःप्रभूतबलदर्पयुताः विबोधाः ।
संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां
प्रक्षालयामि पुरतःस्नपनस्य भूमिम् ॥४॥

(श्रीमज्जिनाभिषेचनाय भूमिशुद्धिं करोमि)

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः
प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेकवारम्
अत्युद्धमुद्यतमहं जिनपादपीठम्
प्रक्षालयामि भवसंभवतापहारि ॥५॥

(श्रीजिनेन्द्रपादपीठं स्नापयामि)

श्रीशारदासुमुखनिर्गतबीजवर्णम्
श्रीमङ्गलीकवरसर्वजनस्य नित्यम् ।

श्रीमत्स्वयं क्षयति तस्य विनाशविघ्नम्
श्रीकारवर्णलिखितं जिनभद्रपीठे ॥६॥

(श्रीजिनेन्द्रपादपीठे श्रीरित्यक्षर लिखामि)

इन्द्राग्निदण्डधरनैऋतपाशपाणि
वायूत्तरेशशशिमौलिफणीन्द्रचन्द्राः
आगत्य यूयमिह सानुचराः सचिह्नाः
स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपाभिषके ॥७॥

(ॐ आँ क्रों ह्रीं श्रीजिनाभिषेचनक्रियायां सर्वविघ्न-
विनाशाय सर्वशान्त्यर्थञ्च इन्द्राग्नियमनैऋतवरुण
पवनकुवेरैशानधरणीन्द्रसोमेभ्यो दिक्पालेभ्यो बलि
प्रयच्छामीति स्वाहा)

दध्युज्ज्वलाक्षतमनोहरपुष्पदीपैः
पात्रार्पितं प्रतिदिनंमहतादरेण ।
त्रैलोक्यमङ्गलसुखानलकामदाह
मारार्तिकं तव विभोरवतारयामि ॥८॥

(ॐ दध्यक्षतपुष्पप्रदीपैजिनेन्द्रस्यारातिकमवतारयामि)

यः पाण्डुकामलशिलागतमादिदेव
मस्नापयन्सुरवराःसुरशैलमूर्ध्नि

कल्याणमीप्सुरहमक्षततोयपुष्पैः
संभावयामि पुरएव तदीयबिम्बम् ॥९॥
(ॐ ह्रीं श्रीमज्जिनेन्द्रबिम्बं जलाक्षतपुष्पाञ्जलिक्षेपणा-
नन्तरं श्रीतिममन्विते पादपीठे स्थापयामि)
सत्पल्लवार्चितमुखान्कलधौतरूप्यान्
ताम्रारकूटघटितान्पयसा सुपूर्णान् ।
सम्वाह्यतामिवगतांश्चतुरःसमुद्रान्
संस्थापयामि कलशान् जिनवेदिकान्ते ॥१०॥
(ॐ अथ सत्पत्रपिहितान् जलसंभृतान् काञ्चन-
कलशान् पादपीठस्य चतुःकोणेषु संस्थापयामि विधिव-
ज्जिनेन्द्राभिषेचनाय)
आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमलबहुलेनामुना चन्दनेन,
श्रीहृक्पेयैरमीभिः शुचिसदलचयैरुद्गमैरेभि रुद्धैः ।
हृद्यैरेभिर्निवेद्यैर्मखभवनमिमैर्दीपयद्भिः प्रदीपैः
धूपैः प्रायोभिरेभिः पृथुभिरपि फलैरेभिरीशं यजामि ॥११॥
(ॐ ह्रीं श्री परमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने
ऽर्घंनिर्वपामीतिस्वाहा)
दूरावनम्रसुरनाथनाथकिरीटकोटि

संलग्नरत्नकिरणच्छविधूसरांघ्रिम् ।
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टै
र्भक्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाभिषिञ्चे ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीमतं भगवन्तं कृपालसंतं वृषभादिमहावीर-चतुर्विंशतितीर्थङ्करपरमदेवान् आद्यानामाद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे ········नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे मासे ·····पक्षे ········शुभदिने मुन्यार्यिकाश्रावक-श्राविकाचतुर्विधसंघान् सकलकर्मक्षयार्थं जलेनाभिषिञ्चे नमः ॥

(जलधाराक्षेपणमर्घसम्प्रदानञ्च)

उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिराम-
देहप्रभावलयसंगमलुप्तदीप्तिम्
धारां घृतस्य शुभगन्धगुणानुमेयां
वन्देऽर्हतां सुरभिसंस्नपनोपयुक्ताम् ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीमतं भगवन्तं···········सकलकर्मक्षयार्थं घृतेनाभिषिंचे नमः ॥

(घृतधाराक्षेपणमर्घसम्प्रदानञ्च)

सम्पूर्णशारदशशाङ्कमरीचिजाल

स्यन्दैरिवात्मयशसामिव सुप्रवाहैः।
क्षीरैर्जिनाः शुचिवरैरभिषिच्यमानाः
सम्पादयन्तु मम चित्तसमीहितानि ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीमतं भगवन्तं ············ सकल कर्मक्षयार्थं क्षीरेणाभिषिञ्चे नमः।

(क्षीरधाराक्षेपणमर्घसम्प्रदानञ्च)

दुग्धाब्धिवीचिपयसाचितफेनराशि-
पाण्डुत्वकान्तिमवधीरयतामतीव।
दध्नां गतां जिनपते प्रतिमां सुधारा
सम्पद्यतां सपदि वांछितसिद्धये नः ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीमतं भगवन्तं कृपालसन्तं ············ सकल-कर्मक्षयार्थं दध्नाभिषिञ्चे नमः॥

(दधिधाराक्षेपणमर्घसम्प्रदानञ्च)

भक्त्या ललाटतटदेशनिवेशितोच्चैः
हस्तैश्च्युताः सुरवराऽसुरमर्त्यनाथैः।
तत्कालपीलितमहेक्षुरसस्यधारा
सद्यः पुनातु जिनबिम्बगतैव युष्मान् ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीमतं भगवन्तं कृपालसन्तं ········ सकलकर्म-क्षयार्थं मिक्षुरसेनाभिषिञ्चे नमः॥

(इक्षुधाराक्षेपणमर्घसम्प्रदानञ्च)

संस्नापितस्य घृतदुग्धदधीक्षुवाहैः
सर्वाभिरौषधिभिरर्हतमुज्ज्वलाभिः ।
उद्वर्तितस्य विदधाम्याभिषेकमेला-
कालेयकुंकुमरसोत्कटवारिपूरैः ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीमतं भगवन्तं कृपालसन्तं·········सकल कर्म-
क्षयार्थं सर्वौषधिरसेनाभिषिञ्चे नमः ॥

(सर्वौषधिरसक्षेपणमर्घसम्प्रदानञ्च)

द्रव्यैरनल्पघनसारचतुःसमाद्यै
सामोदवासितसमस्तदिगन्तरालैः ।
मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुङ्गवानां
त्रैलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीमतं भगवन्तं कृपालसन्तं···········सकल
कर्मक्षयार्थं सुगन्धिजलेनाभिषिञ्चे नमः ॥

(सुगन्धिजलक्षेपणमर्घसम्प्रदानञ्च)

मुक्तिश्रीवनिताकरोदकमिदं पुण्याङ्कुरोत्पादकम्,
नागेन्द्रत्रिदशेन्द्रचक्रपदवीराज्याभिषेकोदकम् ।
सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनलतासम्वृद्धिसम्पादकम्
कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिनस्नानस्य गन्धोदकम् ॥१९॥

अथच—

निर्मलं निर्मलीकरणंपवित्रं पापनाशकम् ।
जिनगन्धोदकं वन्दे कर्माष्टकविनाशकम् ॥२०॥
(निजाङ्गे गन्धोदकचर्चनम्)

शान्ति मन्त्र

ॐ नमः सिद्धेभ्यः । श्रीवीतरागाय नमः

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीपार्श्वतीर्थंकराय द्वादशगणपरिवेष्टिताय शुक्लध्यानपवित्राय सर्वज्ञाय स्वयंभुवे सिद्धाय बुद्धाय परमात्मने परमसुखाय त्रैलोक्य-महीव्याप्ताय अनन्तसंसारचक्रपरिमर्दनाय अनन्त-दर्शनाय अनन्तवीर्याय अनन्तसुखाय त्रैलोक्यवशङ्कराय सत्यज्ञानाय सत्यब्रह्मणे धरणेन्द्रफणामण्डलमण्डिताय ऋष्यार्यिकाश्रावकश्राविकाप्रमुखचतुःसंघोपसर्गविनाशाय घातिकर्मविनाशाय अघातिकर्मविनाशाय अपवादम-स्माकं छिंद छिंद भिन्द-भिन्द, मृत्युं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द अतिकामं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, रतिकामं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, क्रोधं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, अग्निं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वशत्रुं छिन्द-छिन्द भिन्द-

भिन्द, सर्वोपसर्गं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वराजभयं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वचोरभयं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वदुष्टभयं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्व-मृगभयं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वपरमन्त्रं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वमात्मकं भयं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वशूलभयं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वक्षयरोगं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वकुष्टरोगं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वज्वरमारीं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वगज-मारीं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वाश्वमारीं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वगोमारीं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वमहिषमारीं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वधान्यमारीं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्ववृक्षमारीं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वगुल्ममारीं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वपत्रमारीं छिन्द-छिन्द, भिन्द-भिन्द, सर्वपुष्पमारीं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वराष्ट्रमारीं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वदेशमारीं छिन्द-छिन्द, भिन्द-भिन्द, सर्वविषमारीं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्वक्रूररोगं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्ववैतालशाकिनीभयं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, सर्ववेदनीयं छिन्द-छिन्द भिन्द-

भिन्द-भिन्द, सर्वमोहनीयं छिन्द-छिन्द भिन्द-भिन्द, ॐ सुदर्शनमहाराजचक्रविक्रमतेजोबलशौर्यशान्तिं कुरु कुरु, सर्वजनानन्दनं कुरु कुरु, सर्वभव्यानन्दनं कुरु कुरु, सर्वगोकुलानन्दनं कुरु कुरु, सर्वग्रामनगरखेटकर्वटमटम्ब पत्तनद्रोणमुखसहानन्दनं कुरु कुरु, सर्वलोकानन्दनं कुरु-कुरु, सर्वदेशानन्दनं कुरु कुरु, सर्वयजमानानन्दनं कुरु-कुरु, हन हन, दह दह, पच पच, कुट कुट, शीघ्रं व्याधिव्यसनवर्जितमभयक्षेमारोग्यं, स्वस्तिरस्तु, शान्तिरस्तु, शिवरस्तु, कुलगोत्रधनधान्यं सदास्तु । चन्द्रप्रभ पुष्पदन्त - शीतल - मुनिसुव्रत - नेमिनाथ - वासुपूज्य - मल्लि-वर्द्धमान-पार्श्वनाथपरमदेवाः सदा शान्तिं कुर्वन्तु कुर्वन्तु इति स्वाहा ॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

स्थापना

ॐ जय । जय । जय ।

नमोस्तु । नमोस्तु । नमोस्तु ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

ॐ अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

चत्तारि मंगलं - अरहन्ता मंगलं, सिद्धा मंगलं साहू मंगलं,

केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं ।

चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा ।

चत्तारि शरणं पव्वज्जामि—अरहंते शरणं पव्वज्जामि, सिद्धे शरणं पव्वज्जामि, साहू शरणं पव्वजामि, केवलिपण्णत्तं, धम्मं शरणं पव्वज्जामि ।

ॐ नमोऽर्हते भगवते स्वाहा (पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

अपवित्रः पवित्रो वा । सुस्थितो दुस्थितोऽपि वा ।
ध्यायेत्पञ्चनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१॥
अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥२॥
अपराजितमन्त्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः ।
मङ्गलेषु च सर्वेषु प्रथमं मङ्गलं मतः ॥३॥
एसो पञ्चणमोयारो सव्वपावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होइ मंगलम् ॥४॥
अर्हमित्यक्षरब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥५॥
कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥६॥

विघ्नौघा: प्रलयं यान्ति शाकिनीभूतपन्नगाः ।
विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥७॥

(यदि समय हो तो पर्वके दिनोंमें सहस्रनामपूजा या सहस्रनाम-स्तवन पाठ पढ़कर दश अर्घ चढाना चाहिए अन्यथा नीचेका पद्य पढ़कर अर्घ चढ़ावे)

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहंयजे ॥

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनसहस्रनामेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं स्याद्वादनायकमनंतचतुष्टयार्हम् । श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतुर्जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ।

स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुङ्गवाय,
स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय ।
स्वस्ति प्रकाशसहजोर्जितदृङ्मयाय,
स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥६॥
स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाप्लवाय,
स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय ।
स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय,

स्वस्ति त्रिकालसकलायतविस्तृताय १०॥

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपम्,

भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः ।

आलम्बनानि विविधान्यवलंब्यवल्गन्,

भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥११॥

अर्हत्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि,

वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेकएव ।

अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवलबोधवह्नौ,

पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥१२॥

(ॐ ह्रीं विधियज्ञप्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

चिद्रूपंविश्वरूपव्यतिकरितमनाद्यन्तमानन्दसान्द्रम् ,

यत्प्राक्तैस्तैर्विवर्तैर्व्यतदतिपतद्दुःखसौख्याभिमानैः ।

कर्मोद्रेकात्तदात्मप्रतिघमलभिदोद्भिन्ननिःसीमतेजः,

प्रत्यासीदत्परोजः स्फुरदिह परमब्रह्मयज्ञेऽहमाह्वम्॥१३॥

ॐ परमब्रह्मयज्ञप्रतिज्ञानाय प्रतिमोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

देव-पूजनम्

—स्थापना —

स्वामिन् संवौषट् कृतावाहनस्य

द्विष्ठान्तेनोट्टंकितस्थापनस्य ।

स्वं निर्नेक्तुं ते वषट्कार जाग्रत्
सांनिध्यस्य प्रारभेयाष्टधेष्टिम् ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्ह श्री परब्रह्म अत्रावतरावतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री परब्रह्म अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठः।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री परब्रह्म अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट्

व्योमापगाद्युत्तमतीर्थवार्गं धारावरांभोजपरागसारा।
तीर्थङ्करानामियमंघ्रिपीठे स्वैरं लुठित्वा त्रिजगत्पुनातु ॥२॥

मलिन वस्तु उज्ज्वल करै यह स्वभाव जलमांहि।
तासों जिनपद पूजिये कृत-कलङ्क मिट जाँहि॥
नीर बुझावे अग्निको तृषारोग नहि जाय।
तृषारोग प्रभु तुम हरो याते पूजूं पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये, अष्टादश-दोष रहिताय, षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरकृष्णागुरुगन्धसारकर्पूरपौरस्त्यविलेपनेन।
निसर्गसौरभ्यगुणोल्वणानां संचर्चयाम्यंघ्रियुगं जिनानाम् ॥

तपत वस्तु शीतल करै चन्दन शीतल आप।
चन्दनसे पूजा करूं मिटै मोह सन्ताप॥
चन्दन शीतलता करै भवाताप नहि जाय।

भवात्ताप प्रभु तुम हरो याते पूजूं पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपरब्रह्मणे····· संसारातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

आमोदमाधुर्यनिधानकुन्दसौन्दर्यशुम्भत्कलमक्षतानाम्।
पुञ्जैः समक्षैरिव पुण्यपुंजैर्विभूषयाम्यग्रभुवं विभूनाम् ॥४॥

तन्दुल धवल पवित्र अति नाम सुअक्षत तास।
अक्षत सों जिन पूजये अक्षयगुणपरकास ॥
अक्षय-अक्षय में कहूं मो अक्षयपद भाय।
अक्षय पद प्रभु तुम लियो याते पूजूं पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपरब्रह्मणे·······अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुजातजातीकुमुदाब्जकुन्दमन्दारमल्लीवकुलादिपुष्पैः।
मत्तालिमालामुखरैर्जिनेन्द्रपादारविन्दद्वयमर्चयामि ॥५॥

पुष्प-चाप धर पुष्प-सर धारी मनमथ वीर।
यातें पूजा पुष्पकी हरै मदनकी पीर ॥
काम-बाण पुष्पै हरो सो तुम जीते राय।
यातें मैं पायन पडूं मदन-काम नशि जाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपरब्रह्मणे·····कामरोगविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नानारसव्यञ्जनदुग्धसर्पिपक्वान्नशाल्यन्नदधीक्षुभक्षम् ।
यथार्थहेमादिसुभाजनस्थं जिनक्रमाग्रे चरुमर्पयामि ॥५॥

परम अन्न नैवेद्य-विधि क्षुधा-हरण तन-पोष ।
जो पूजूं नैवेद्यसों मिटे क्षुधादिक-रोग ॥
भोजन नानाविधि किए मूल क्षुधा नहि जाय ।
क्षुधा-रोग प्रभु तुम हरो यातें पूजूं पाय ॥

ॐ ह्रां अर्हं श्रीपरब्रह्मणे ········ क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ लोकानामर्हतां भूर्भुवःस्वर्लोकानेकीकुर्वतां ज्ञानधाम्ना ।
दीपव्रातैर्प्रज्वलत्कीलजालैः पादांभोजद्वंद्वमुद्योतयामि ॥६॥

आप-परदेखे सकल, निशिमें दीपक-जोत ।
दीपकसों जिन पूजिये निर्मल ज्ञान-उद्योत ॥
दीप-घटा घटमें वसै ज्ञान-घटा घरमाहिं ।
ढूढत डोले कर्मको कृत-कलंक मिट जाहिं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपरब्रह्मणे ········ मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखण्डादिद्रव्यसंदर्भगर्भैरुद्यद्भूम्यामोदितास्वर्गिवर्गैः ।
धूमैः पापव्यापदुच्छेददक्षानंघ्रीनर्हत्स्वामिनां धूपयामि ॥८॥

पावक दहै सुगन्धको, धूप चढावै सोय ।

खेवत धूप जिनेशको अष्ट-कर्म-क्षय होय ॥
जब धूपायनमें लगे ध्यान-अग्नि-करवीर ।
कर्म-काठिया खेव हूं त्रिभुवन-पति गम्भीर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपरमब्रह्मणे ... अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा

फलोत्तमैर्दाडिममातुलिंगनारिंगपुंगाम्रकपित्थपूर्वैः ।
हृद्घ्राणनेत्रोत्सवमुद्गिरद्भिः फलैर्भजेर्हत्पदपद्मयुग्मम् ॥८॥

जो जैसी करनी करै सो तैसा फल लेय ।
फल-पूजा महाराजकी निश्चय शिव-फल देय ॥
फलियन-फलियन मैं कहूं सो फलियन फल नाहिं ।
महा मोक्ष-फल तुम लियो यातैं पूजूं पाहिं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री परब्रह्मणे ... ... मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

वार्गंधादिद्रव्यसिद्धार्थदूर्वा
नंद्यावर्तस्वास्तिकाद्यैरनिद्यैः ।
हैमेपात्रे प्रस्तृतं विश्वनाथात्-
प्रत्यानन्दादर्घमुत्तारयामि ॥९॥

जलधारा चन्दन-घसी अक्षत-पुष्प-नैवेद्य ।
दीप-धूप-फल-अर्घ युत ये पूजा ...

ये जिनपूजा अष्टविधि कीजे कर शुचि अंग ।
प्रति-पूजा जल-धार सु दीजे धार अभंग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपरब्रह्मणे ·········· अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वृषभो वृषलक्ष्मीवानजितो जितदुष्कृतः ।
संभवः संभवत्कीर्तिः साभिनंदोऽभिनंदनः ॥
सुमतिः सुमतिः पद्मप्रभः पद्मप्रभः प्रभुः ।
सुपार्श्वः पार्श्वरोचिष्णुश्चन्द्रश्चन्द्रप्रभः सताम् ॥
पुष्पदंतोस्तपुष्पेषुः शीतलः शीतलोदितः ।
श्रेयान् श्रेयस्विनां श्रेयान् सुपूज्यः पूज्यपूजितः ॥
विमलो विमलोऽनन्तज्ञानशक्तिरनन्तजित् ।
धर्मो धर्मोदयादित्यः शान्तिः शान्तिक्रियाग्रणीः ॥
कुंथुः कुंथ्वादिसदयः सुरप्रीतिररप्रभुः ।
मल्लिर्मल्लिजये मल्लः सुव्रतो मुनिसुव्रतः ॥
नमिर्नमितसुरासारो नेमिर्नेमिस्तपोरथे
पार्श्वः पार्श्वस्फुरद्रोचिः सन्मतिः सन्मतिप्रियः ॥
एते तीर्थकृतोनंतैर्भूतसद्भाविभिः समम् ।
पुष्पाञ्जलिप्रदानेन सत्कृताः सन्तु शांतये ॥

(ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचतुर्विंशतीर्थंकरेभ्योः पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि).

शास्त्र-पूजनम्

—स्थापना—

प्रकटितपरमार्थे शुद्धसिद्धान्तसारे
जिनपतिसमयेऽस्मिन् शारदासंदधानः ।
जगति समयसारः कीर्तितोऽसौ मुनीन्द्रैः
स विशतु मम चित्ते, सत्श्रुतज्ञानरूपः ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भूतनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञान ! अत्रावतरावतर । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

अतुलसौख्यनिधानमनायकं शिवप्रदं विपदन्तकरं परम् ।
जगहितं जिननाथमुखोद्गतं समयसारमहं सलिलैर्यजे ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

विषयभोगविवर्धितसुस्थितः त्रिभुवनं प्रतिबोधमयो नया-
दुदयमत्रगतो वरचन्दनैः समयसारसहस्रकरोऽर्च्यते ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत······ ·· चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

भवविषोक्षितचेतनसत्सुखं मदनदुष्टज्वरशमनौषधिम् ।
शुभनिधिं प्रतिबोधितसत्सुखं समयसारमिहाक्षतकैर्यजे ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत·········अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभपदार्थमणिद्युतिभिः घृतं प्रहतदुर्धरमोहतमोभरम् ।
समयसारनिधिं सुदरिद्रता-प्रशमनाय महामि सरोरुहैः ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत······· पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रसुनरामरनाथमुखोद्गतस्तुतिवचःकुसुमोत्करपूजितम् ।
समयसारमपाररसान्वितैश्चरूवरैप्र यजे शिवशर्मणे ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत··· ····· नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

विमलकेवलबोधविधायिनीं समयसारमयीं किल देवताम् ।
हततमप्रसरैर्मणिदीपकैर्भगवतीं महतीं परिपूजये ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत · · दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दृग्विबोधसुवृत्तमहौषधिशमितजन्मजरामरणामयम् ।
अगरुणां गुरुधूपभरादहं समयसारमसारहरं यजे ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत · धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

समयसारमयीं त्रिदशापगां परमहंसकुलोद्भवसूचिकाम् ।
त्रिभुवने, कलुषक्षयकारिणीं शुभफलैः पुनतीं परिपूजये ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत ·· · फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

विषमजाड्यपविनाशपटीयसीं स्फुटतरां प्रतिभैकविवर्धिनीम् ।
समयसारमयीं श्रुतदेवतां मृदुदुकूलपटेन समर्चये ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत ····शास्त्रस्वरूपाय वस्त्रं निर्वपामीति स्वाहा ।

[सरोरुहैः शुभाक्षतैः सरसचन्दननिर्मलैः, कनत्कनकभाजनस्थितैर्दीपैस्तथा धूपैर्यजे । अभीष्टफल-लब्धये फलैर्मुदा परमपदप्राप्तये सरस्वतीमहमर्घैर्यजे ?]

जलैः सुगन्धैर्विमलाक्षतैश्च नैवेद्यदीपागरुधूम्रकैर्वा ।
नेत्रोत्सवैः स्वादुफलैः समर्घैः सञ्चर्चयामि श्रुतदेवतायै ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत ········ अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

त्रिजगदीशजिनेन्द्रमुखोद्भवा, त्रिजगतीजनजातिहितङ्करा ।
त्रिभुवने सुनुताहि सरस्वती, चिदुपलब्धिमियं वितनोतु मे ॥
अखिलनाकशिवाध्वनदीपिका, नवनयेषु विरोधविनाशिनी ।
मुनिमनाम्बुजमोदनभानुभा, चिदुपलब्धिमियं वितनोतु मे ॥
यतिजनाचरणादिनिरूपिणी, द्विदशभेदगतागतिदूषिणी ।
भवभवातपनाशनचन्द्रिका, चिदुपलब्धिमियं वितनोतु मे ॥
गुणसमुद्रविशुद्ध्यपरात्मनि, प्रकटनैककथासुपटीयसी ।
जितसुधा निजभक्तशिवप्रदा, चिदुपलब्धिमियं वितनोतु मे ॥
विविधदुःखजले भवसागरे, गदजरादिकनक्रझषाकुले ।
असुभृतां किल तारण-नौ-समा, चिदुपलब्धिमियं वितनोतु मे॥
गगनपुद्गलधर्मअधर्मकैः सहसदा सगुणैश्चिदनेहसी ।
नवपदार्थविनश्वयिनी सदा, चिदुपलब्धिमियं वितनोतु मे ॥
गुरुरयं हितवाक्यमिदं गुरु, शुभमिदं जगतामथवाऽशुभम् ।

यतिजनो हि यतोत्रऽवलोक्यते, चिदुपलब्धिमियं वितनोतु मे
त्यजत दुर्मतिमेव शुभे मतिं, प्रतिदिनं कुरुते च गुणे रतिम्।
जड़नरेऽपिदयार्पितधीधना, चिदुपलब्धिमियं वितनोतु मे ॥
खलु नरस्य मनो रमणीजने, न रमते रमते परमात्मनि।
यदनुभक्तिभरस्य नरस्य वै, चिदुपलब्धिमियं वितनोतु मे ॥
विविधकाव्यकृते मतिसंभवे, भवति चार्थतदर्थविचारणे।
यदनुभक्तिभरान्वितमानवे, चिदुपलमियं वितनोतु मे ॥१०॥

योऽहर्निशं पठति मानसमुक्तिसारम्।
स्यादेव तस्य भवनीरसमूहपारम्।
मुक्तं जिनेन्द्रवचसो हृदयं जहार
श्रीज्ञानभूषणमुनिः स्तवनं चकार ॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

गुरु-पूजनम्

सिद्धान्त-सूक्तिसंकीर्णे श्रुतस्कन्ध-घने वने।
आचार्यत्वं प्रपन्नस्य पादानभ्यर्चये मुनेः ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसाधुसमूह अत्रावतरावतर। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

हेमभृङ्गारनिर्यातहारया वारिधारया।
पूजयामि गुरुं भक्त्या गौतमं गणनायकम् ॥१॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसाधुसमूहाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री खण्डागुरुकर्पूरामिश्रया गन्धचर्चया ।

पूजयामि गुरुं भक्त्या गौतमं गणनायकम् ॥२॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसाधुसमूहाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षतैरक्षयानन्तसम्पत्सम्पादनक्षमैः ।

पूजयामि गुरुं भक्त्या गौतमं गणनायकम् ॥३॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्याय साधुसमूहाय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

पुष्पैश्चम्पकपुन्नागमल्लिकाबकुलादिनाम् ।

पूजयामि गुरुं भक्त्या गौतमं गणनायकम् ॥४॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसाधुसमूहाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नैवेद्यनानवद्येन सुधासारसमञ्चषा ।

पूजयामि गुरुं भक्त्या गौतमं गणनायकम् ॥५॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसाधुसमूहाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपैर्कर्पूरनिर्भ्रान्तवर्तिकाग्रविनिर्गतैः ।

पूजयामि गुरुं भक्त्या गौतमं गणनायकम् ॥६॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्याय साधुसमूहाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सौरभ्याकृष्ट सन्धूपै धूम्रै रगरुसंभवैः ।

पूजयामि गुरुं भक्त्या गौतमं गणनायकम् ॥७॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसाधुसमूहाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फलैर्नारिङ्गजम्बीरजम्म्बाद्यहृद्यतां गतैः ।

पूजयामि गुरुं भक्त्या गौतमं गणनायकम् ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसाधुसमूहाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

यमनियमनिधीनामर्चयित्वा यतीना-

मपरमितगुणानामंघ्रिपद्मानि भक्त्या ।

तदनुसकलभव्यप्राणिकर्मोपशांत्यै,

सुचरमुपचरामि वारिभिः शान्तिधारा ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसाधुसमूहाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

गुरुवः शान्ति वो नित्यं ज्ञानदर्शननायकाः ।

चारित्रार्णवगम्भीरा मोक्षमार्गोपदेशकाः ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसाधुसमहाय पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

स्वस्ति मङ्गलम्

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः ।

श्रीसंभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनंदनः ।

श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः ।

श्री सुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचंद्रप्रभः ।

श्रीपुष्पदंतः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः ।

श्रीश्रेयांसः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः ।

श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनंतः ।

श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः ।

श्रीकुंथुः स्वस्ति स्वस्ति श्रीअरनाथः ।

श्रीमल्लिः स्वस्ति स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः ।

श्रीनमिः स्वस्ति स्वस्ति श्रीनेमिनाथः ।

श्रीपार्श्वः स्वस्ति स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः ।

(पुष्पांजलि क्षेपण)

नित्याप्रकंपाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनःपर्ययशुद्धबोधाः ।
दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि ।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥
संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघ्राणविलोकनानि ।
दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहंतः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥
प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येक बुद्धा दशसर्वपूर्वैः ।
प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञा स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥
जंघावलिश्रेणिफलांबुतंतुप्रसूनबीजांकुरचारणाह्वाः ।
नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि
लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि ।

मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं,
स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

सकामरूपित्ववशित्वमैश्यप्राकम्यमंतर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः ।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः । स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः ।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरंतः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥
आमर्षसर्वौषधयस्तथाशीर्विषंविषादृष्टिर्शीविषंविषाश्च ।
सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥
क्षीरं स्रवंतोऽत्र घृतं स्रवंतो मधुस्रवंतोऽप्यमृतं स्रवंतः ।
अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

(इति परमर्षिस्वस्तिमंगलविधानम्)

देव-शास्त्र-गुरु-पूजनम्

सार्वः सर्वज्ञनाथः सकलतनुभृतां पापसन्तापहर्ता, ।
त्रैलोक्याक्रांतकीर्तिः क्षतमदनरिपुर्घातिकर्मप्रणाशः ।
श्रीमान्निर्वाणसंपद्वरयुवतिकरालीढकंठैः सुकंठै-
र्देवेंद्रैर्वंद्यपादो जयति जिनपतिः प्राप्तकल्याणपूजः ॥ १ ॥

जय जय जय श्रीसत्कांतिप्रभो जगतां पते !
जय जय भावानेव स्वामी भवांभसि मज्जताम् ।

जय जय महामोहध्वांतप्रभातकृतेऽर्चनम् ।

जय जिनेश त्वं नाथ प्रसीद करोम्यहम् ॥ २ ॥

ओं ह्रीं भगवज्जिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट्

ओं ह्रीं भगवज्जिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं भगवज्जिनेंद्र ! अत्रसमसन्निहितो भव भव । वषट्

देवि श्रीश्रुतदेवते भगवति ! त्वत्पादपंकेरुह-

द्वंद्वे यामि शिलीमुखत्वमपरं भक्त्यामया प्रार्थ्यते ।

मातश्चेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भूते सदा त्राहि माम्,

दृग्दानेन मयि प्रसीद भवतीं संपूजयामोऽधुना ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं जिनमुखोदुभूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट्

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रु तज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः ।

तपः प्राप्तप्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संव०

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट् ।

देवेंद्रनागेंद्रनरेंद्रवंद्यान् शुम्भत्पदान् शोभितसारवर्णान् ।
दुग्धाब्धिसंस्पर्धिगुणैर्जलोघैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ताम्यत्त्रिलोकोदरमध्यवर्तिसमस्तसत्त्वाहितहारिवाक्यान् ।
श्रीचंदनैर्गंधविलुब्धभृंगैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥२॥

संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन् सुभक्त्या ।
दीर्घाक्षतांगैर्धवलाक्षतौघैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥३॥

अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्यान्वर्यान् सुचर्याकथनैकधुर्यान् ।
कुंदारविन्दप्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥४॥

कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

कुदर्पकंदर्पविसर्प्पसर्प्पप्रसह्यनिर्णाशनवैनतेयान् ।
प्राज्याज्यसारैश्चरुभी रसाढ्यैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहं ॥५॥

क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्वस्तोद्यमांधीकृतविश्वविश्वमोहांधकारप्रतिघातदीपान् ।
दीपैः कनत्कांचनभाजनस्थैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहं ॥६॥

मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दुष्टाष्टकर्मेन्धनपुष्टजालसंधूपने भासुरधूमकेतून् ।
धूपैर्विधूतान्यसुगंधगंधैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥७॥

अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षुभ्याद्विलुभ्यन्मनसाप्यगम्यान्
कुवादिवादाऽस्खलितप्रभावान् ।
फलैरलं मोक्षफलाभिसारै-
र्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥८॥

मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सद्वारिगंधाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः ।
फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोगान् जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम्॥९॥

अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ये पूजां जिननाथशास्त्रयमिनां भक्त्या सदा कुर्वते ।
त्रैसंध्यं सुविचित्रकाव्यरचनामुच्चारयन्तो नराः ।
पुण्याढ्याः मुनिराजकीर्तिसहिताः भूत्वातपोभूषणा-
स्ते भव्याःसकलावबोधरुचिरां सिद्धिं लभन्ते पराम् ॥१॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

वृषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनंदनः ।
सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥१॥
चंद्राभः पुष्पदंतश्च शीतलो भगवान्मुनिः ।
श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥२॥
अनंतो धर्मनामा च शांति कुंथुर्जिनोत्तमः ।
अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥३॥
हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ।
ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेंद्रपूजितः ॥४॥
कर्मान्तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसंभवः ।
एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥५॥
पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः ।
चतुर्विधस्य संघस्य शांतिं कुर्वन्तु शाश्वतीम् ॥६॥
जिनेभक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्ति सदाऽस्तु मे ।
सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥७॥

(पुष्पाञ्जलि क्षिपामि)

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सज्ज्ञानमेव संसारवारणं मोक्षकरणम् ॥८॥

(पुष्पाञ्जलि क्षिपामि)

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे ।

चारित्रमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥६॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

देवजयमाला प्राकृत

वत्ताणुट्ठाणे जणधणुदाणे पइपोसिउ तुहु खत्तधरु ।
तुहु चरण विहाणे केवलणाणे तुहु परमप्पउ परमपरु ॥१॥
जय रिसहरिसीसर णमियपाय । जय अजिय जियंगमरो-सराय ॥ जय संभव संभवकयवियोय । जय अहिणंदण णंदिय पओय ॥२॥ जय सुमइ सुमइसम्मयपयास, जय पउमप्पह पउमाणिवास ॥ जय जयहि सुपास सुपासगत्त । जय चंदप्पह चंदाहवत्त ॥३॥ जय पुप्फयंत दंतंतरंग । जय सीयल सीयलवयणभंग ॥ जय सेय सेयकिरणोहसुज्ज । जय वासुपुज्ज पुज्जाण पुज्ज ॥४॥ जय विमल विमलगुणसेढिठाण जय जयहि अणंताणंतणाण । जय धम्म धम्मतित्थयर संत । जय सांति सांति विहियायवत्त ॥५॥ जय कुंथु कुंथुपहुअंगिसदय । जय अर अर माहर विहियसमय ॥ जय मल्लि मल्लि आदामगंध । जय मुणिसुव्वयसुव्वयणिबंध ॥६॥ जय णमि णमियामरणियरसामि । जय णेमि धम्मरहचक्कणेमि । जय पास पासछिंदणकिवाण । जय वड्ढमाण जसवड्ढमाण ॥७॥

घत्ता—इह जाणिय णामहिं दुरियविरामहिं परहिंवि णमिय सुरावलिहिं। अणहणहिं अणाइहिं समिय कुवाइहिं पणविवि अरहंतावलिहिं ॥

ॐ ह्रीं वृषभादिमहावीरान्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो अर्घं निर्व०

शास्त्रजयमाला।

संपइसुहकारण कम्मवियारण भवसमुद्दतारणतरणं। जिणवाणि णमस्समि सत्तिपयासमि सग्गमोक्खसंगमकरणं ॥१॥ जिणंदमुहाओ विणिग्गयतार। गणिंदविगुंफिय गंथपयार ॥ तिलोयहिमंडण धम्मह खाणि। सया पणमामि जिणिंदह-वाणि ॥२॥ अवग्गह ईह अवाय जु एहिं। सुधारणा भेइहिं तिण्णि सएहि ॥ मई छत्तीस बहुप्पमुहाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥३॥ सुदं पुण दोण्णि अणेयपयार। सुबारहभेय जगत्तयसार ॥ सुरिंदणरिंदसमुच्चिय जाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥४॥ जिणिंदगणिंदणरिंदह रिद्धि। पयासइ पुण्ण पुराकिउलद्धि ॥ णिउग्गुपहिल्लउ एहु वियाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥५॥ जु लोय अलोयह जुत्ति जणेइ। जु तिण्णि विकालसरूव भणेइ ॥ चउग्गइ लक्खण दुज्जउ जाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥६॥ जिणिंदचरित्तविचित्त

मुणेइ । सुसावहिधम्महं जुत्ति जणेइ ॥ णिउग्गु वि तिज्जउ इत्थु वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥७॥ सुजीव अजीवह तच्चह चक्खु । सुपुण्ण विपाव विबंध विमुक्खु ॥ चउत्थुणिउग्गुविभासिय जाणि । सया पण-मामि जिणिंदह वाणि ॥८॥ तिभेयहिं ओहिविणाणविचित्तु । चउत्थरिजोविउलं मइउत्तु ॥ सुखाइय केवलणाण वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥९॥ जिणिंदह णाणु जग-त्तत भाणु । महातमणासिय सुक्खणिहाणु ॥ पयच्चउ भत्तिभरेण वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥१०॥ पयाणि सुबारहकोडि सयेण । सुलक्ख तिरासिय जुत्ति भरेण ॥ सहस अट्ठावण पंच वियाणि । सया पण-मामि जिणिंदह वाणि ॥११॥ इक्कावण कोडिउ लक्ख अठेव । सहसचुलसीदियसा छक्केव ॥ सढाइगवीसह गंथ-पयाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥१२॥

घत्ता—इह जिणवरवाणि विशुद्धमई । जो भवियण णियमण धरई । सो सुरणरिंद संपइ लहई । केवलणाण वि उत्तरई ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

गुरु जयमाला

भवियह भवतारण, सोलहकारण, अज्जवि तित्थयरत्तणहं ।
तवकम्म असंगइ दयधम्मंगइ पालवि पंच महव्वयहं ॥१॥

वंदामि महारिसि सीलवंत । पंचेंद्रियसंजम जोगजुत्त ॥ जे ग्यारह अंगह अणुसरंति । जे चउदह पुव्वह मुणि थुणंति ॥२॥ पदाणु सारवर कुट्ठबुद्धि । उप्पण्णु जाह आयासरिद्धि ॥ जे पाणाहारी तोरणीय जे । रुक्खमूल आतावणीय ॥३॥ जे मोणिधाय चंदाहणीय । जे जत्थत्थवणि णिवासणीय ॥ जे पंचमहव्वय धरणधीर । जे समिदिगुत्ति पालणहि वीर ॥४॥ जे वड्ढहिं देहविरत्तचित्त । जे राय-रोमभयमोहचित्त ॥ जेकुगइहि संवरु विगयलोह । जे दुरियविणासणकामकोह ।५॥ जे जल्लमल्लतणलित्त गत्त । आरंभपरिग्गह जे विरत्त ॥ जे तिण्णकाल बाहर गमंति । छट्ठट्ठमदसमउ तउ चरंति ॥६॥ जे इक्कगास दुइगास लिंति जे णीरसभोयण रइ करंति ॥ ते मुणिवर बंदउं ठियमसाण, जे कम्मडहइ वर सुक्कझाण ॥७॥ बारहविह-संजम जे धरंति । जे चारिउ विकहा परिहरंति ॥ बावीस परीषह जे सहंति । संसारमहण्णउ ते तरंति ॥८॥ जे धम्मबुद्धि महियलि थुणंति । जे काउस्सगो णिसि गमंति ॥

जे सिद्धविलासणि अहिलसंति। जे पक्खमास आहार लिंति ॥ ६ ॥ गोदूहण जे वीरासणीय। जे धणुहसेज वज्जासणीय। जे तववलेण आयास जंति जे गिरि गुह-कंदरविवरथंति ॥१०॥ जे सत्तु मित्त समभाव चित्त। ते मुनिवर वंदउं जगपवित्त ॥ ११ ॥ जे सुज्झाणिज्झा एकचित्त। वंदामि महारिसि मोखपत्त ॥ रयणत्तयरंजिय सुद्धभाव। ते मुणिवर वंदउं ठिदिसहाव ॥१२॥

घत्ता—जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धवधू अणुराईया। रयणत्तयरंजिय, कम्महगंजिय, ते ऋषिवरमय झाईया ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचरित्रगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसाधु-समूहायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

स्फुट अर्घ

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे ॥१॥

ॐ ह्रीं सीमंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहुसंजातस्वयंप्रभऋषिभानन अनन्तवीर्यसूर्यप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचंद्राननभद्रबाहुभुजंगम ईश्वर-नेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशअजितवीर्येतिविंशतिविद्यमानतीर्थङ्क-रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान् नित्यं त्रिलोकीं गतान्।

वंदे भावनव्यंतरान् द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान् ॥
सद्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैर् ।
द्रव्यैर्नीरमुखैर्यजामि सततं दुष्कर्मणां शांतये ॥१॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसंबंधिजिनबिंबेभ्योऽर्घ्यं निर्व०

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु ।
यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिनपुंगवानाम् ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणाम् ।
वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ॥
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानाम् ।
जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥३॥

जंबूधातकिपुष्करार्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवा-
श्चंद्रांभोजशिखंडिकंठकनकप्रावृड्घना भाजिनः ॥
सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधराः दग्धाष्टकर्मेन्धनाः ।
भूतानागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥४॥

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचिके कुंडले मानुषांके ।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥५॥

द्वौ कुंदेंदुतुषारहारधवलौ द्वाविंद्रनीलप्रभौ ।

द्वौ बन्धूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियङ्गुप्रभौ ॥
शेषाः षोडशजन्ममृत्युरहिताः संतप्तहेमप्रभास् ।
ते मज्ज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥६॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-कृत्याकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्वपा०

इच्छामि भंते चेइयभत्ति काओसग्गो कओतस्सालोचेओ अहलोय तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेयाणि ताणि सव्वाणि, तीसुवि लोयेसु भवणवासिय वाणविंतरजोयसियकप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण पुप्फेण दिव्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ह्णणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति । अहमवि इहसंतो तत्थसंताइ णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ॥

(इत्याशीर्वादः । पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

अथ पौर्वाह्णिक - माध्याह्णिक - अपराह्णिकदेव - वंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावंदनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

णमो अरहंताणं । णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं णमो

उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं । तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

द्रव्यभावसिद्धपूजनम्

ऊर्ध्वाधोरयुतं सबिंदु सपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितम् ।
वर्गापूरितदिग्गतांबुजदलं तत्संधितत्त्वान्वितम् ॥
अंतःपत्रतटेष्वनाहतयुतं ह्रींकारसंवेष्टितम् ।
देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकंठीरवः ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ । ठःठः । ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् । अत्र मम सन्निहितो । भव भव । वषट् ।

निरस्तकर्मसंबधं, सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।
वंदेऽहं परमात्मानममूर्तमनुपद्रवम् ॥१॥

सिद्ध-मन्त्र-स्थापनम्

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्म्यगम्यम्,
हान्यादिभावरहितं भववीतकायम् ।
रेवापगावरसरोयमुनोद्भवानाम्,
नीरैर्यजेकलशगैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

निजमनोमणिभाजनभारया, समरसैकसुधारसधारया ।

सकलबोधकलारमणीयकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥१॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं नि०

आनंदकंदजनकं घनकर्ममुक्तं,
सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननार्तिवीतम् ।
सौरभ्यवासितभुवं हरिचंदनानां,
गंधैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

सहजकर्मकलंकविनाशनैरमलभावसुवासितचंदनैः ।
अनुपमानगुणावलिनायकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥२॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं,
सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम्-
सौगंध्यशालिवनशालिवराक्षतानां,
पुंजैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

सहजभावसुनिर्मलतंदुलैः सकलदोषविशालविशोधनैः ।
अनुपरोधसुबोधनिधानकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥३॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतम् ॥

नित्यं स्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं,
द्रव्यानिपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् ।
मंदारकुंदकमलादिवनस्पतीनां,

पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

समयसारसुपुष्पसुमालया सहजकर्मकरेण विशोधया ।
परमयोगबलेन वशीकृतं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥४॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामविध्वंसनाय पुष्पम्

ऊर्ध्वस्वभावगमनं सुमनोव्यपेतं,
ब्रह्मादिबीजसहितं गगनावभासम् ।
क्षीरान्नसाज्यवटकैः रसपूर्णगर्भै-
नित्यं यजे चरुवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

अकृतबोधसुदिव्यनैवेद्यकैर्विहितजातजरामरणांतकैः ।
निरवधिप्रचुरात्मगुणालयं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥५॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने नैवेद्यम्

आतंकशोकभयरोगमदप्रशांत-
निर्द्वंद्वभावधरणं महिमानिवेशं ।
कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातैर्,
दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

सहजरत्नरुचिप्रतिदीपकैः, रुचिविभूतितमः प्रविनाशनैः ।
निरवधिस्वविकाशप्रकाशनैः सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥६॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपम्

पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितांतं,
त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रदीपम् ।

सद्द्रव्यगंधघनसारविमिश्रितानां,
धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

निजगुणाक्षयरूपसुधूपनैः स्वगुणघातिमलप्रविनाशनैः ।
विशदबोधसुदीर्घसुखात्मकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥७॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपम्

सिद्धासुराधिपतियक्षनरेंद्रचक्रै-
र्ध्येयं शिवं सकलभव्यजनैःसुवंद्यम् ।
नारिंगपूगकदलीवरनारिकेलैः
सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

परमभावफलावलिसंपदा, सहजभावकुभावविशोधया ।
निजगुणास्फुरणात्मनिरंजनं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥८॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलम्

गंधाढ्यं सुपयोमधुव्रतगणैः संगं वरं चंदनम् ।
पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकम् ॥
धूपं गंधयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये ।
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वांछितम् ॥

नेत्रोन्मीलिविकाशभावनिवहैरत्यंतबोधाय वै ।
वार्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैः ॥
यश्चिन्तामणिशुद्धभावपरमज्ञानात्मकैरर्चयेत् ।

सिद्धं स्वादुमगाधबोधमचलं संचर्चयामो वयम् ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं,

सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनंतवीर्यम् ।

कर्मौघकक्षदहनं सुखसस्यबीजं,

वंदे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्ध परमेष्ठिने महार्घं निर्व० स्वाहा ॥

त्रैलोक्येश्वरवंदनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीम् ।

यानाराध्य निरुद्धचंडमनसः संतोऽपितीर्थंकराः ॥

सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदाऽव्याबाधताद्यैर्गुणैर्

युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥

(पुष्पाञ्जलि क्षिपामि)

जयमाला

विराग सनातन शांत निरंश । निरामय निर्भय निर्मल हंस ॥ सुधाम विबोधनिधान विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१॥ विदूरित-संसृतिभाव निरंग । समामृत-पूरित देव विसंग ॥ अबंधकषाय विहीनविमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥२॥ निवारितदुष्कृतकर्मविपास । सदामल केवलकेलिनिवास । भवोदधिपारग शान्तविमोह ।

प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥३॥ अनंतसुखामृतसागर धीर। कलंकरजोमलभूरिसमीर ॥ विखंडितकाम विरामविमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥४॥ विकारविवर्जित तर्जित-शोक। विबोधसुनेत्रविलोकितलोक ॥ विहार विराव विरंग विमोह प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥५॥ रजोमलखेदविमुक्त विगात्र। निरंतर नित्य सुखामृतपात्र ॥ सुदर्शनराजित नाथ विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥६॥ नरामर-वंदित निर्मलभाव। अनंत मुनीश्वरपूज्य विहाव ॥ सदो-दय विश्वमहेश विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥७॥ विदंभ वितृष्ण विदोष विनिद्र। परात्परशंकरसार वितंद्र ॥ विकोप विरूप विशंक विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥८॥ जरामरणोज्झित वीतविहार। विचिंतित निर्मल निर-हंकार ॥ अचिंत्यचरित्र विदर्प विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥९॥ विवर्ण विगंध विमान विलोभ। विमाय विकाय विशब्द विशोभ ॥ अनाकुल केवल सर्वविमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१०॥

असमसमयसारं चारुचैतन्यचिह्नं, परपरणतिमुक्तं पद्मनंदीन्द्रवंद्यम्। निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति सो ऽभ्येति मुक्तिम् ॥११॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्धभक्तिविधानम् ।

यस्यानुग्रहतो दुराग्रहपरित्यक्तात्मरूपात्मनः
सद्द्रव्यचिदचित्त्रिकालविषयं स्वैः स्वैरभीक्ष्णं गुणैः ।
सार्थव्यंजनपर्ययैः समवयज्जानाति बोधः समम्
तत्सम्यक्त्वमशेषकर्मभिदुरं सिद्धान् परं नौमि वः ॥१॥

यत्सामान्यविशेषयोः सह पृथक् स्वान्यस्थयोर्दीपव-
च्चित्तं द्योतकमुद्विरन्मुदभरं नो रज्यति द्वेष्टि न ।
धाराग्राह्यपि तत्प्रतिक्षणनवीभावोद्धुरार्थार्पित-
प्रामाण्यं प्रणमामि वः फलितदृग्व्यप्त्युक्तिमुक्तिश्रिये ॥२॥

सत्तालोचनमात्रमित्यपि निराकारं मतं दर्शनम्
साकारं च विशेषगोचरमिति ज्ञानं प्रमादीच्छया ।
ते नेत्रे क्रमवर्तिनी सरजसां प्रादेशिके सर्वतः
स्फूर्जन्ती युगपत्पुनर्विरजसां युष्माकमंगोतिगाः ॥३॥

शक्तिव्यक्तिविभक्तविश्वविविधाकारौघकर्मीरिता-
नंतानंतभवस्थमुक्तपुरुषोत्पादव्ययध्रौव्यान्वयात् ।
स्वं स्वं तत्त्वमसंकरव्यतिकरं कर्तुं नु क्षणं प्रत्यथो
भोत्क्षणमन्वयतः स्मरामि परमाश्चर्यस्य वीर्यस्य वः ॥४॥

यद्व्याहंति न जातु किंचिदपि न व्याहन्यते केनचि-
द्यन्निष्पीतसमस्तवस्त्वपि सदा केनापि न स्पृश्यते ।
यत् सर्वज्ञसमक्षमप्यविषयं तस्यापि चार्थाद्गिराम्
तद्वः सूक्ष्मतमं स्वतत्त्वमभि वा भाव्यं भवोच्छित्तये ॥५॥
गत्वा लोकशिरस्य धर्मवशतश्चंद्रोपमे सन्मुख-
प्राग्भाराख्यशिलातलोपरि मनागूनैकगव्यूतिके ।
योगोज्झांगदरो न मित्यपि मिथो संबाधमेकत्र य-
ल्लब्ध्यानंतमितोपि तिष्ठथ स वः पुण्यावगाहो गुणः ॥६॥
सिद्धाश्चेद्गुरवो निराश्रयतया भ्रश्यंत्ययःपिंडव-
त्तेऽधश्चेल्लघवोर्कतूलवदितश्चेतश्च चंडेन तत् ।
क्षिप्यंते तनुवातवातवलयेनेत्युक्ति युक्त्युद्भुतै-
र्नामोपज्ञमपीष्यते गुरुलघुः क्षुद्रैः कथं वो गुणः ॥७॥
यत्तापत्रयहेतिभैरवभवोदर्चिः शमाय श्रमो
युष्माभिर्विदधे व्यपश्यत तदव्याबाधमेतद्ध्रुवम् ।
येनोद्वेलसुखामृतार्णवनिरातंकाभिषेकोल्लस-
न्चित्कायान् कलयापि वः कलयितुं श्राम्यंति योगीश्वराः ॥
एतेनंतगुणाद्गुणाः स्फुटमयोदधृत्याष्ट दिष्टा भव-
त्तत्त्वा भावयितुं सतां व्यवहृतिप्राधान्यतस्तात्त्विकैः ।
एतद्भावनया निरंतरगलद्वंकल्पजालस्य मे

स्तादत्यंतलयः सनातनचिदानंदात्मनि स्वात्मनि ॥९॥
उत्कीर्णामिव वर्तितामिव हृदि न्यस्तामिवालोकय-
न्नेतां सिद्धगुणस्तुतिं पठति यः शश्वच्छिवाशाधरः।
रूपातीतसमाधिसाधितवपुः पातः पतद्दुष्कृत-
व्रातः सोऽभ्युदयोपभुक्तसुकृतः सिद्धेत् तृतीये भवे ॥१०॥

पुष्पांजलिपूजनम्

प्रथमं सुदर्शनमेरुपूजनम्

जिनान् संस्थापयाम्यत्रा-ह्वानानादिविधानतः।
सुदर्शनविधिं पूजां, पुष्पांजलिविशुद्धये ॥१॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

स्वधुनीजलनिर्मलधारया,
विशदकांतिनिशाकरभास्या।
प्रथममेरुसुदर्शनदिग्स्थितान्,
यजत षोडशनित्यजिनालयान् ॥१॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-भद्रशाल—नन्दन—सौमनस पांडुकवनसंम्बन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयचंदनमर्दितसद्द्रवैः, सुरभिकुंकुमसौरभमिश्रितैः।
प्रथममेरुसुदर्शन० चंदनम् ॥

असकलैरमलैः शुभशालिजै-र्विधुकरोज्वलकांतिभिरक्षतैः।
प्रथममेरुसुदर्शन० अक्षतम् ॥

अमरपुष्पसुवारिजचंपकै-र्बकुलमालतिकेतकिसंभवैः।
प्रथममेरुसुर्शन० पुष्पम् ॥

घृतवरादिसुगंधिचरूत्करैः, कनकपात्रचितै रसनाप्रियैः।
प्रथममेरुसुदर्शन० नैवेद्यम् ॥

मणिघृतादिवरैर्वरदीपकै,-स्तरलदीप्तिविरोचितदिग्गणैः।
प्रथममेरुसुदर्शन० दीपम् ॥

अगुरुदेवतरूद्भवधूपकैः, परिमलोद्गमधूपितविष्टपैः।
प्रथममेरुसुदर्शन० धूपम् ॥

क्रमुकदाडिमनिम्बुकसत्फलैः, प्रमुखपक्वफलैः सरसोत्तमैः।
प्रथममेरुसुदर्शन० फलम् ॥

विमलसलिलधाराशुभ्रगंधाक्षतौघैः, कुसुमनिकरचारुवेष्ट-

नैवेद्यवर्ग्गैः। प्रहततिमिरदीपैर्धूपधूम्रैः फलैश्च, रजतरचितमर्घं रत्नचंद्रो भजेऽहम्। अर्घम्॥

जयमाला।

जम्बूद्वीपधरास्थितस्य सुमहामेरोश्च पूर्वादिषु, दिग्भागेषु चतुर्षु षोडशमहाचैत्यालये सद्वनैः। नानाच्छमाजविभूषितैर्मणिमयैर्भद्रादिशालांतकैः, संयुक्तस्य निवासिनो जिनवरान् भक्त्या स्तवीमि स्तवैः ॥१॥ जन्मदूरा नता देववर्गैर्निष्कलाः, स्वेदवीताः सदा क्षीरदेहाकुलाः। मेरुसंबंधिनो वीतरागा जिनाः संतु भव्योपकाराय संपूजिताः ॥२॥ शुद्धवर्णांकिताः शुद्धभावोद्धराः रत्नत्रयोज्वलाः सद्गुणैर्निर्भराः॥ मेरु० ।३। मानमायातिगा मुक्तिभावोद्धराः, शुद्धसद्बोधशंकादिदोषाहराः मेरु० ।४। क्षुत्तृषामोहकक्षेषु दावानलाः, प्रोल्लसद्बोधदीपाः सुधांशूत्कराः। मेरु०।५। पूर्णचंद्राभतेजोभिः निर्निवेशकाः चंद्रसूर्य्यप्रतापाः करावेशकाः। मेरु० ।।६।।

इतिरचितफलौघाः प्राप्तसुज्ञानपाराः, हततमघनपापाः नम्रसर्वामरेन्द्राः। गतनिखिलविलापाः कान्ति-दीप्ता जिनेन्द्रा, अपगतघनमोहाः सन्तु सिद्ध्यै जिनेन्द्राः ।।७।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन—सौमनस—पांडुक—वनसम्बन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः

पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सर्वव्रताधिपं सारं, सर्वसौख्यकरं सताम् ।

पुष्पांजलिव्रतं पुष्याद्युष्माकं शाश्वतीं श्रियम् ।।८।।

[इत्याशीर्वादः]

द्वितीयविजयमेरुपूजनम्

जिनान्संस्थापयाम्यत्रा—ह्वानानादिविधानतः ।

धातुकीखंडपूर्वाशा,—मेरोविजयवर्तिनः ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर०
ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः
ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सुतोयैः सुतीर्थोद्भवैर्धौतदोषैः,
सुगांगेयभृंगारनालाम्यसंगैः ।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातुकीस्थम्,
यजे रत्नबिम्बोज्ज्वलं रत्नचन्द्रः ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल— नन्दन —सौमनस—पाडुव वनसंबन्धिपूर्व—दक्षिणपश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुगंधागतालिव्रजैःकुंकुमादिद्रवैश्चन्दनैश्चंद्रपूर्णाभिगमैः ।
द्वितीयं सुमेरुं० । गंधम् ।

सुशाल्यक्षतैरक्षतैर्दिव्यदेहैः, सुगंधाक्षतारब्धभृंगारगानैः ।
द्वितीयं सुमेरुं० ।   अक्षतम् ।

लवंगैः प्रसूनैस्ततामोदवद्भिः, सुमंदारमालापयोजादिजातैः ।
द्वितीयं सुमेरुं० ।   पुष्पम् ।

मनोज्ञैः सुखाद्यैर्गवीनाज्यतप्तैः, सुशाल्योदनैर्मोदकैर्मंड-
काद्यैः । द्वितीयं सुमेरुं० ।   नैवेद्यम् ।

प्रदीपैर्हतध्वांतरत्नादिभूतैः, ज्वलत्कीलजातैर्भृशं भासुरैश्च ।
द्वितीयं सुमेरुं० ।   दीपम् ।

सुधूपैः सुगन्धीकृताशापमूहैर्भ्रमद्भृंगयूथैः शुभैश्च-
न्दनाद्यैः । द्वितीयं सुमेरुं० ।   धूपम् ।

शुभैर्मोचचोचाम्रजंबाग्रकाद्यैर्मनोभीष्टदानप्रदैः सत्फलाद्यैः ।
द्वितीयं सुमेरुं० ।   फलम् ।

विशुद्धै रष्टमद्द्रव्यै—र्घमुत्तारयाम्यहम् ।
हेमपात्रस्थितं भक्त्या जिनानां विजयौकसाम् । अर्घ्यम् ।

जयमाला

सकलकलिलमुक्ताः सर्वसंपत्तियुक्ता
गणधरगणसेव्याः कर्मपंकप्रणष्टाः ।
प्रहतमदनमानास्त्यक्तमिथ्यात्वपाशाः
कलितनिखिलभावास्ते जिनेन्द्रा जयंतु ॥१॥

विमोह विसारितकामभुजंग, अनेकसदाविधिभाषितभंग ।
कषायदवानलतत्त्वसुरंग, प्रसीद जिनोत्तम मुक्तिप्रसंग ॥२॥
निरीह निरामय निर्मलहंस, सुचामरभूषितशुद्धसुवंस ।
अनिद्यचरित्र विमानितकंस, प्रसीद जिनोत्तम मुक्तिप्रसंग ॥३॥
प्रबोध विबोधजगत्त्रयसार, अनंतचतुष्टयसागरपार ।
निवारित सर्वपरिग्रहभार, प्रसीद जिनोत्तम मुक्तिप्रसंग ॥४॥
तपोभरदारितकर्मकलंक, विरोग विभोग वियोग विशंक ।
अखंडित चिन्मयदेहप्रकाश, प्रसीद जिनोत्तम मुक्तिप्रसंग ॥५॥
विवर्जितदोष गुणौघकरंड, प्रसारितमान तपोमददंड ।
अपारभवोदधितारतरंड, प्रसीद जिनोत्तम मुक्तिप्रसंग ॥६॥

दृगवगमचरित्राः प्राप्तसंसारपाराः,
सकलशशिनिभासाः सर्वसौख्यादिवासाः ।
विदितविभवशिष्टाः प्रोल्लसद्ज्ञानशिष्टाः,
ददतु जिनवरास्ते मुक्तिसाम्राज्यलक्ष्मीम् ॥७॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल—नन्दन—सौमनस—पांडुकवन सम्बन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वव्रताधिपं सारं सर्वसौख्यकरं सताम् ।

पुष्पांजलिव्रतं पुष्याद्युष्माकं शाश्वतीं श्रियम् ॥८॥

(इत्याशीर्वादः)

तृतीयं अचलमेरुपूजनम् ।

जिनान्संस्थापयाम्यत्रा–ह्वानानादिविधानतः ।
धातुकीपश्चिमाशास्थाचलमेरुप्रवर्तिनः ॥१॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुसंबंधिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतरावतर ।
ॐ ह्रीं अचलमेरुसंबंधिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः
ॐ ह्रीं अचलमेरुसंबंधिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सौरभ्याहृतमद्गंधसारया जलधारया ।
अचलमेरुजिनेंद्राय जराजन्मविनाशिने ॥ जलम् ॥

चारुचंदनकर्पूरकाश्मीरादिविलेपनैः । अचल० । चंदनम् ।
अक्षतैरक्षतानंदसुखध्यानविधानकैः । अचल० । अक्षतम् ।
जातिकुन्दादिराजीवचंपकानेकपल्लवैः । अचल० । पुष्पम् ।
स्वाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः मन्नाढ्यैः सुकृतैरिव । अ० । नैवेद्यम् ।
दशाग्रैः प्रस्फुरद्दीपैर्दीपैः पुण्यजनैरिव । अ० । दीपम् ।
धूपैः संधूपितानेककर्मभिर्धूमदायिभिः । अ० । धूपम् ।
नारिकेलादिभिः पुंगैः फलैः पुण्यजनैरिव । अ० । फलम् ।
जलगन्धाक्षतानेकपुष्पनैवेद्यदीपकैः । अ० । अर्घ्यम् ।

जयमाला

श्रीधातकीखण्डविदेहसंस्थं तृतीयमेरुं सुरसङ्घयुक्तम् ।
शुम्भत्प्रदीपोत्कररत्नबन्धं संस्तौम्यहं सद्गुणरत्नमालम् ॥

श्रितखेचरकिन्नरदेवगणं यात्रागतयतिवरचरणरणम् ।
नानाविधिरचनारचितप्रभं वन्दे गिरिराजमहं महितम् ॥
मणिभूषितपार्श्वयुगं वलयं सुविराजितजिनप्रतिमानिलयम् ।
जिनवरमङ्गलगुणगानरवं वन्दे गिरिराजमहं महितम् ॥
विबुधाश्रितविविधविकारहरं भविकामलभावितभावधरम् ।
संभवदुज्ज्वलगुणगणनिकरं वन्दे गिरिराजमहं महितम् ॥
सिंहासनभावितधवलशिलं क्षीरार्णवजलभरधौततलम् ।
नानाविभवं जनतापहरं वन्दे गिरिराजमहं महितम् ॥

विविधमणिनिबद्धं भूगतं भद्रशालम्
कनकरचितपार्श्वं बद्धसोपानपंक्तिम् ॥
स्फटिकविमलसान्द्रं पाण्डुकावासदेशम् ।
गिरिवरमहमर्चे भावनाभिस्समर्घैः ॥

ॐ ह्रीं श्रीतृतीयाचलमेरुस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्य पदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वव्रताधिपं सारं सर्वसौख्यकरं नृणाम् ।

पुष्पाञ्जलिव्रतं पुष्याद् युष्माकं शाश्वतीं श्रियम् ॥

(इत्याशीर्वादः)

(सिरिसन्ताने रिसह जिणजाई अजित जिणंद जिणंदह पयकमलो । इह कुसुमांजलि होइ मनोहर मेलहिया, गिरिकैलासे जाइपहारे मेलहिया ॥१॥ संभवजिण सेवंतिसही, अहि अहिनन्दन मेह जिणंद जिणंदह पयकमलो । इह कुसुमांजलि० ॥२॥ सुमति जे सुमति देहु जिण, पउमप्पह जिनदेव जिणंदह पयकमलो । इह कुसुमांजलि० ॥३॥ मंदारिहि सुपासजिन चन्दप्पह चम्पेह जिणंदह पयकमलो । इह कुसुमां० । ४ । पुप्पदन्त परमेष्ठिजिन, सीतल सीय जिणंद जिणंदह पयकमलो । ५ । जिनश्रेयांसह असोयपही, वासुपूज्य वउलेह जिणंदह पयकमलो । इह कुसु० । ६ । विमलभण्डारी सुरतरही, शुक्लवेहि जिणंद जिणंदह पयकमलो । इह कुसु० । ७ । बहुमचकुन्दहिं धर्मजिन, रत्नप्पह जिणशांति जिणंद जिणंदह पयकमलो । इहकुसु० । ८ । युत्तय फुल्लय कुन्थुजिण, अर जिन पास जिणंद जिणंदह पयकमलो । इहकुसु० ।९। मल्लिय हुल्लिय मल्लिजिणु मुनिसुव्रत जिनहुल्ल जिणंदह

पयकमलो । इह० । १० । नमि जिनवर केवलयाहो, जांप अजितजिणंद जिणंदह पयकमलो । इह० । ११ । पाड-लहुल्लिय पासजिन, वड्ढमान कमलोहि जिणंद जिणंदह पयकमलो । इह० । १२ । पावनेहु पुज्जहु अवले अवनि अवरअभयारि जिणंदह पयकमलो । इह० । १३ । गुरुपय-पुज्जह तिन्निलए, अवरु न पडहु संसार जिणंदह पय-कमलो । इह० । १४ । इहरयणांजुलि विणयमहु, जो जिणनाहि होइ जिणंदह पयकमलो । इह० । १५ । भाद्र-वशुक्ल सुपंचमिह पंच दिवस कारइ, जिणंदह पयकमलो । इह कुसुमांजलि होइ मनोहर मेलहिया गिरिकैलासे जाइ पहारे मे लहिया । १६ ।)

यावंति जिनचैत्यानि विद्यंते भुवनत्रये ।
तावंति सततं भक्त्या त्रिपरीत्य नमाम्यहम् ।१७।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसंबंधिभद्रशाल—नन्दन—सौमनस—पांडुकवन सम्बन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थ-जिनविम्बभ्यः । पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।

सर्वव्रताधिपं सारं सर्वसौख्यकरं सताम् ।
पुष्पांजलिव्रतं पुष्याद्युष्माकं शाश्वतीं श्रियम् ।१।

इत्याशीर्वादः ,

चतुर्थ मन्दिरमेरुपूजनम् ।

जिनान्संस्थापयाम्यत्राह्वानानादिविधानतः ।
मेरुमन्दिरनामस्थान, पुष्पांजलिविशुद्धये । १ ।

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुसबंधिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर ।
ॐ ह्रीं मंदिरमेरुसबंधिजिनसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठः ।
ॐ ह्रीं मंदिरमेरुसबंधिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

गंगागतैर्जलचयैः सुपवित्रतांगैः, रम्यैः सुशीतलतरैर्भवता-पभेद्यैः । मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्रसमर्चनीयं, श्रीमंदिरं विततपुष्करद्वीपसंस्थम् ।

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुसंबंधिभद्रशाल—नन्दन–सौमनस-पांडुकवनसंबंधिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।।

काश्मीरकुंकुमरसैर्हरिचन्दनाद्यैः, गन्धोत्कटैर्वनभवैर्घनसार-मिश्रैः । मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्रसमर्चनीयं, श्रीमंदिरं विततपुष्करद्वीपसंस्थम् । २ । चन्दनम् ।

चन्द्रांशुगौरविहितैः कलमाक्षतोघैः-घ्राणप्रियैरवितथैर्विमलै-रखण्डैः । मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्रसमर्चनीयं, श्रीमंदिर विततपुष्करद्वीपसंस्थम् । ३ । अक्षतम्

गन्धागतालिनिवहैः शुभचम्पकादि,—पुष्पोत्करैरमरपुष्प-युतैर्मनोज्ञैः । मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्रसमर्चनीयं, श्रीमंदिरं विततपुष्करद्वीपसंस्थम् ॥ ४ ॥ पुष्पम् ।

स्वर्णादिपात्रनिहितैर्घृतपक्वखण्डैर्नानाविधैर्घृतवरैः रसनेंद्रियेष्टैः । मेरुं यजेऽखिलसुरेन्द्रसमर्चनीयं, श्रीमन्दिरं विततपुष्करद्वीपसंस्थम् ॥५॥ नैवेद्यम् ।

कर्पूरदीपनिचयैर्निहतांधकारैः—रुद्भासिनीशनिकरैःशुभकीलजालैः । मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्रसमर्चनीयं, श्रीमन्दिरं विततपुष्करद्वीपसंस्थम् ॥६॥ दीपम् ।

कालागुरुत्रिदशदारुसुचंदनादि,—द्रव्योद्भवैः शुभगगंधसुधूपधूम्रैः । मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्रसमर्चनीयं, श्रीमन्दिरं विततपुष्करद्वीपसंस्थम् ॥७॥ धूपम् ।

नारिंगपुंगपनसाम्रसुमोचचोचैः श्रीलांगलप्रमुखभव्यफलैः सुरम्यैः । मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्रसमर्चनीयं, श्रीमन्दिरं विततपुष्करद्वीपसंस्थम् ॥८॥ फलम् ॥

जलैःसुगंधाक्षतचारुपुष्पै,-र्नैवेद्यदीपैर्वरधूपवर्गैः ।
फलैर्महार्घं ह्यवतारयामि, श्रीरत्नचन्द्रो यतिवृंद-सेव्यम् ॥९॥ अर्घम् ॥

जयमाला ।

प्रोद्यत्षोडशलक्षयोजनमितश्रीपुष्कराद्ध स्थितः,
श्रीमत्पूर्वविदेहमंदिरगिरिर्देवेंद्रवृन्दार्चितः ॥
चंचत्पंचसुवर्णरत्नजटितो नानाप्रमोघोर्जित-
स्तत्संबंधिजिनौकसां गुणगणान् संस्तौम्यहं सर्वदा ।

देवविद्याधराधीश्वरैः चर्चितं किन्नरीगीतकलगानसंजृंभितम् । नर्तितानेकदेवांगनासुन्दरं, श्रीजिनागारवारं भजे भासुरम् । ॥२॥ जन्मकल्याणसंमोहितामरबलं, दर्शितानेकदेवांगनासुन्दरम् । प्रोल्लसत्केतुमालालयैः सुन्दरं, श्रीजिनागारवारं भजे भासुरम् ॥३॥ धूपघटधूपितावासशोभावरं, रत्नसंभर्जितालीभिराशाकुलम् । अष्टमंगलमहाद्रव्यचयसुन्दरं, श्रीजिनागारवारं भजे भासुरम् ॥४॥ तालवीणामृदंगादिपटहस्वरं, कल्पतरुपुष्पवापीतडागैर्वरम् । चारणर्द्धिमुनिवरसंगताशाधरं, श्रीजिनागारवारं भजे भासुरम् ॥५॥ रुचिरमणिमयैर्गोपुरैः शोभातिगं प्रेमहर्म्यावलीमुक्तिमालाभृतम् । तुंगतोरणलसद्घंटिकाभंगुरं, श्रीजिनागारवारं भजे भासुरम् ॥६॥

विविधविषयभाव्यं भव्यसंसारतारं, शतमखशतपूज्यं प्राप्तसज्ज्ञानपारम् । विषयविषमदुष्टव्यालपक्षीशमीशं, जिनवरनिकरं तं रत्नचन्द्रोभजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल—नंदन—सौमनस—पांडुकवन सम्बन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्योपूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वव्रताधिपं सारं सर्वसौख्यकरं सताम् ।
पुष्पांजलिव्रतं पुष्याद्युष्माकं शाश्वतीं श्रियम् ॥८॥

(इत्याशीर्वादः)

पंचमं विद्युन्मालिमेरुपूजनम् ।

जिनान्संस्थापयाम्यत्राह्वानानादिविधानतः ।
पुष्करे पश्चिमाशास्थान, विद्युन्मालीप्रवर्तिनः ॥१॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट् ।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ओं ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

निर्मलैः सुशीतलैर्महापगाभवैर्वनैः
शातकुंभकुंभगैर्जगज्जनांगतापहैः ।
जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं,
पंचमं सुमंदिरं महाम्यहं शिवप्रदम् ॥ १ ॥

ओं ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नंदन-सौमनस—पांडुक वनसम्बन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थ जिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

चन्दनैः सुचन्द्रसारमिश्रितैः सुगंधिभिरर्कवेणुमूलभूत-वर्जितैर्गुणोज्वलैः । जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पंचमं सुमंदिरं महाम्यहं शिवप्रदम् ॥ २ ॥ चंदनम् ॥

इन्दुरश्मिहारयष्टिहेमभासभासितैः रक्षतैरखंडितैः सुलक्षितै-र्मनःप्रियैः । जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पंचमं सुमंदिरं महाम्यहं शिवप्रदम् ॥ ३ ॥ अक्षतम्

गंधलुब्धषट्पदैः सुपारिजातपुष्पकैः पारिजातकुन्ददेवपुष्प-मालतीभवैः । जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पंचमं सुमंदिरं महाम्यहं शिवप्रदम् ॥ ४ ॥ पुष्पम् ॥

प्राज्यपूरपूरितैः सुखज्जकैः सुमोदकैः इन्द्रियप्रसादकैः सु-चारुभिश्चरूत्करैः । जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पञ्चमं सुमन्दिरं महाम्यहं शिवप्रदम् ॥ ५ ॥ नैवेद्यम् ॥

अन्धकारभारनाशकारणैर्दशैंधनैः रत्नसोमजैः प्रदीप्तिभूषितैः शिखोज्वलैः । जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पञ्चमं सुमन्दिरं महाम्यहं शिवप्रदम् ॥ ६ ॥ दीपम् ॥

सिल्हिकागुरूद्भवैः सुधूपकैर्नभोगतैः गंधवासचक्रकेश

वृन्दकैः गुणोज्वलैः । जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पञ्चमं सुमन्दिरं महाम्यहं शिवप्रदम् ॥ ७ ॥ धूपम् ॥

आम्रदाडिमैः सुमोचचोचकैः शुभैः फलैः, मातुलिंगनारिकेर पूर्गानिम्बुकादिभिः । जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पञ्चमं सुमन्दिरं महाम्यहं शिवप्रदम् ॥ ८ ॥ फलम् ॥

जलगंधाक्षतैः पुष्पैश्चरुदीपसुधूपकैः ।

फलैरुचारयाम्यर्घं विद्युन्मालिप्रवर्तिनाम् ॥९॥ अर्घम्

जयमाला ।

संस्तुवे मन्दिरं पञ्चमं सुसद्गुणं सुमुक्त्यंगचैत्यालयं भासुरांगम् । चलद्रत्नसोपानविद्याधरीशं, नमो देवनागेंद्रम-र्त्येन्द्रवृन्दम् ।१। भद्रशालाभिधारण्यसंशोभितं, कोकिलानां कलालापसंकूजितम् । पुष्कराद्धाचलासंस्थितं मन्दिरं, चञ्च-लामालिनं पूजये सुन्दरम् ॥२॥ नन्दनैर्नन्दितानेकलोकाकरै,-र्भ्राजमानं सदाशोकवृक्षोत्करैः ॥पुष्क० ॥३॥ सौमनस्यैर्वनैः कल्पवृक्षादिभिः-र्भ्राजमानं बुधागारकेत्वादिभिः पुष्क० ।४। ऊर्ध्वगैः पांडुकैः काननैः राजितं, पांडुकाख्याशिलाभिः समा-लिंगितम् । पुष्क० । ५ । निर्जितानेकरत्नप्रभाभासुरं, दिक्-चतुष्काश्रिताहत्प्रभाभासुरम् । पुष्कराद्धाचलासंस्थितं मन्दिरं, चंचलामालिनं पूजये सुन्दरम् ॥६॥

घण्टातोरणतालिकाब्जकलशैः छत्राष्टद्रव्यैः परैः,
श्रीभामंडलचामरैः सुरचितैः चन्द्रोपकरणादिभिः ।
त्रैकाल्ये वरपुष्पजाप्यजपनैर्जैनाकरोत्वर्च्यतां,
भव्यैर्दानपरायणैः कृतदयैः पुष्पांजलेः शुद्धये ॥७॥

ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नंदन-सौमनस-पांडुक वनसंबंधिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सर्वव्रताधिपं सारं सर्वसौख्यकरं सताम् ।
पुष्पांजलिव्रतं पुष्याद्युष्माकं शाश्वतीं श्रियम् ॥

(इत्याशीर्वादः)

विधुवसुरसचन्द्रांकैः प्रयुक्ते कृतार्चा शरदि नभासे मासे रत्नचन्द्रश्चतुर्थ्याम् । धवलभृगुसुवारे सांगवादे पुरेत्र जिनवृषगगलादिश्रावकादेशतोऽव्यात् ।

(इत्याशीर्वादः)

पंचमेरुसमुच्चयपूजनम्

संवौषडाहूय निवेश्य ठाभ्यां सान्निध्यमानीय वषट्पदेन ।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुस्थितजिनचैत्यालयस्थजिनबिंब ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टकम् ।

सुसिंधुमुख्याखिलतीर्थसार्था–बुभिः शुभांभोजरजोभिरामैः ।
श्रीपञ्चमेरुस्थजिनालयानां, यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ।

आद्यः सुदर्शनो मेरुर्विजयश्चाचलस्तथा ।
चतुर्थो मन्दरो नाम विद्युन्माली सुपञ्चमः ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुस्थचैत्यालयस्थजिनविम्बेभ्यो जन्ममृत्युविना० जलम्

कर्पूरपूरस्फुरदत्युदारैः सौरभ्यसारैर्हरिचन्दनाद्यैः ।
श्रीपञ्चमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ।

ॐ ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यः संसार० चंदनम्

शाल्यक्षतैः कैरवकुड्मलानां गुणत्रयेण भ्रममात्रहद्भिः ।
श्रीपंञ्चमेरुस्थजिमालयानां, यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ।

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनविम्बेभ्यो अक्षतम्

प्रधानसंतानकमुख्यपुष्प–सुगंधिताभ्च्छदतुच्छभृङ्गैः ।
श्रीपञ्चमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ।

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनविम्बेभ्यो पुष्पम ।

सद्यस्तनैः क्षीरघृतेक्षुमुख्यैः सद्द्रव्यभव्यैश्चरुभिः सुगन्धैः ॥
श्रीपञ्चमेरुस्थजिनालयानां० ॥ नैवेद्यम् ॥

तमोविनाशप्रकटीकृतार्थै–र्दीपैरशेषज्ञवचोनुरूपैः ।
श्रीपंचमेरुस्थ० ॥ दीपम् ॥

स्वपापरत्नःपरिणाशधूम्रै रिवोरुकृष्णागरुधूपधूम्रैः ।
श्रीपंचमेरुस्थ० ॥ धूपम् ॥

नारिंगमुख्याखिलवृक्षपक्वफलैः सुगंधैः सरसैः सुवर्णैः ।
श्रीपंचमेरुस्थ० ॥ फलम् ॥

वार्गंधपुष्पाक्षतदीपधूपनैवेद्यदूर्वाफलवद्भिरर्घैः ।
श्रीपंचमेरुस्थ० ॥ अर्घम् ॥

जयमाला

अर्धपुष्करपर्यन्तमेरुस्थितजिनालयान् ।
नमामि सततं भक्त्या सम्यक्त्वस्य विशुद्धये ॥

जन्मदूरा नता देवकैर्निष्कलाः स्वेदवीताः सदा क्षीरदेहाकुलाः । मेरुसंबधिनो वीतरागा जिनाः संतु भव्योपकाराय संपूजिताः ॥ शुद्धवर्णांकिताः शुद्धभावोद्धुराः रत्नवर्णोज्ज्वलाः सद्गुणैर्निर्भराः ॥ मेरुसम्बन्धिनो वीतरागा जिना सन्तु भव्योपकाराय सम्पूजिताः ॥ मानमायातिगा मुक्तिभावोद्धुराः, शुद्धसद्बोधशंकादिदोषाहराः ॥ मेरु० ॥ क्षुत्पामोहकक्षेषु दावानलाः, प्रोल्लसद्बोधदीपाः सुधांशूत्कराः ॥ मेरु० ॥ पूर्णचंद्राभतेजोभिः निर्निवेशकाः चंद्रसूर्यप्रतापाः करावेशकाः ॥ मेरु० ॥

इतिरचितफलौघाः प्राप्तसुज्ञानपाराः,
हततमघनपापाः नम्रसर्वामरेन्द्राः ।

गतनिखिलविलापाः कान्तिदीप्ता जिनेन्द्राः
अपगतघनमोहाः सन्तु सिद्ध्यै जिनेन्द्राः ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दिर-विद्युन्मालीतिपंचमेरुस्थजिनालयस्थस्थजिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

नन्दीश्वरद्वीपपूजनम् ।

स्थानासनार्घ्यप्रतिपत्तियोग्यं, भद्रावसन्मानजलादिभिश्च ।
लक्ष्मीसुतागमनवीर्यसुदर्भगर्भैः, संस्थापयामि भुवनाधिपतिं-जिनेंद्रम् ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरदीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टकम् ।

तीर्थोदकैर्मणिसुवर्णघटोपनीतैः, पीठे पवित्रवपुषि प्रविकल्पितार्थैः । नन्दीश्वरद्वीपजिनालयार्च्यान् समर्चये चाष्टदिनानि भक्त्या ।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्भागे एक अंजनगिरिचतुर्दधिमुखाष्टरतिकरेति त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ,

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्भागे त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्भागे त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्भागे त्रयोदशजिनालयेभ्योजलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखण्डकर्पूरसुकुंकुमाद्यैर्गन्धैः सुगंधीकृतदिग्विभागैः । नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्च्यान् समर्चये० चन्दनम् ।

शाल्यक्षतैरक्षतदीर्घगात्रैः सुनिर्मलैश्चन्द्रकरावदातैः । नन्दीश्वरद्वीपजिनालयार्च्यान् समर्चये० अक्षतम् ।

अंभोजनीलोत्पलपारिजातैः कदंबकुंदादितरुप्रसूनैः । नन्दीश्वरद्वीपजिनालयार्च्यान् समर्चये० पुष्पम् ॥

नैवेद्यकैः कांचनपात्रसंस्थैर्न्यस्तैरुदस्तैर्हरिणा सुहस्तैः नन्दीश्वरद्वीजिनालयार्च्यान्० नैवेद्यम् ।

दीपोत्करैर्ध्वस्ततमोवितानैरुद्योतिताशेषपदार्थजातैः । नन्दीश्वरद्वीप० दीपम् ।

कर्पूरकृष्णागरुचन्दनाद्यैर्धूपैर्विचित्रैर्वरगंधयुक्तैः । नन्दीश्वरद्वीप० । धूपम् ॥

लवङ्गनारिंगकपित्थपूगश्रीमोचचोचादिफलैः पवित्रैः । नन्दीश्वरद्वीप० । फलम् ।

श्रीचन्दनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।

यजे त्रिकालोद्भवजैनबिम्बान् भक्त्या स्वकर्मक्षयहेतवेऽहम् ।
ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपस्थजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घम् नि०
श्रीचन्दनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
सद्भावनावासजिनालयस्थान् जिनेन्द्रबिम्बान्प्रयजे मनोज्ञान्
ॐ ह्रीं भावनामरजिनालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
श्रीचन्दनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
जम्ब्वाख्यद्वीपस्थजिनालयस्थान् जिनेन्द्रबिंबान् प्रयजे म-
नोज्ञान् ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थजिनालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
श्रीचन्दनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
श्रीधातकीखण्डजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रयजे मनो-
ज्ञान् ॥
ॐ ह्रीं धातकीखंडद्वीपस्थजिनालयजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति० ।
श्रीचन्दनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
श्रीपुष्करद्वीपजिनालयस्थान् जिनेन्द्रबिंबान् प्रयजे मनोज्ञान् ॥
ॐ ह्रीं पुष्करार्द्धद्वीपस्थजिनालयजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति० ।
श्रीचन्दनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
सत्कुंडलाद्रिस्थजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥
ॐ ह्रीं कुण्डलगिरिद्वीपस्थजिनालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति०

श्रीचन्दनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
श्रीमन्नगे वै रुचिके हि संस्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रयजे मनो-
ज्ञान् ॥

ॐ ह्रीं रुचिकगिरिस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीचन्दनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
सद्व्यंतराणां निलयेषु संस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनो-
ज्ञान् ॥

ॐ ह्रीं अष्टप्रकारव्यन्तरदेवानां गृहेषु जिनालयबिंबेभ्योऽर्घं नि० ।

श्रीचन्दनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
चन्द्रार्कताराग्रहऋक्षज्योतिष्माणां यजे वै जिनबिंबवर्यान् ॥

ॐ ह्रीं पंचप्रकारज्योतिष्काणां देवानां गृहेषु जिनालयस्थजिन
बिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

कल्पेषु कल्पातिगकेषु चैव देवालयस्थान् जिनदेवबिंबान् ।
सन्नीरगन्धाक्षतमुख्यद्रव्यैर्यजे मनोवाक्तनुभिर्मनोज्ञान् ॥

ॐ ह्रीं कल्पकल्पातीतसुरविमानस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति० ।

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकीं गतान्,
वन्दे भावनव्यंतरद्युतिवरस्वर्गामरावासगान् ॥
सद्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलै-
र्द्रव्यैर्नीरमुखैर्यजामि सततं दुष्कर्मणां शांतये ॥

ॐ ह्रीं कृत्याकृत्रिमजिनालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति०

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वन्दे जिनपुङ्गवानां ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् । इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥

जम्बूधातकिपुष्करार्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवा-
श्चंद्राम्भोजशिखंडिकण्ठकनकप्रावृड्घनाभाजिनः ।
सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेन्धनाः
भूतानागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे, वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचके कुण्डले मानुषांके । इक्ष्वाकारेंजानाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके, ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥ द्वौ कुन्देंदुतुषारहारधवलौ द्वाविंद्रनीलप्रभौ, द्वौ बन्धूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ । शेषाः षोडश जन्ममृत्युरहिताः सन्तप्तहेमप्रभा-स्ते सज्ज्ञानदिवाकरा सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥

णोकोडिसया पणवीसा त्रेपणलक्खाण सहससत्ताईसा ।
णोसेते पडियाला जिणपडिमाकिट्टिमा वन्दे ॥

ओं ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यायालस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति०

[अतीतचतुर्विंशतितीर्थंकरनामानि]

निर्वाणसागराभिख्यो माधुर्यो विमलप्रभः ।
शुद्धवाक् श्रीधरो धीरो दत्तनाथोऽमलप्रभः ॥१॥
उद्धराह्वोऽग्निनाथश्च संयमः शिवनायकः ।
पुष्पांजलिर्जगत्पूज्यस्तथा शिवगणाधिपः ॥२॥
उत्साही ज्ञाननेता च महनीयो जिनोत्तमः ।
विमलेश्वरनामान्यो यथार्थश्च यशोधरः ॥३॥
कर्मसंज्ञोऽपरो ज्ञान–मतिः शुद्धमतिस्तथा ।
श्रीभद्रपदकांतश्चातीता एते जिनाधिपाः ॥४॥
नमस्कृतसुराधीशैर्महीपतिभिरर्चिताः ।
वन्दिता धरणेंद्राद्यैः सन्तु नः सिद्धिहेतवे ॥५॥

ओं ह्रां अतीतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

[वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थंकरनामानि]

ऋषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनन्दनः ।
सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥१॥
चन्द्राभः पुष्पदन्तश्च शीतलो भगवान्मुनिः ।
श्रेयांसो वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥२॥
अनन्तो धर्मनामा च शांतिकुन्थू जिनोत्तमौ ।

अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥३॥

हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ।

ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ॥४॥

कर्मांतकृतन्महावीरः । सिद्धार्थकुलसंभवः ।

एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥५॥

पूजिता भरताद्यैश्च भूपेंद्रैर्भूरिभूतिभिः ।

चतुर्विधस्य संघस्य शांतिं कुर्वंतु शाश्वतीम् ॥

ओं ह्रीं वर्तमानविंशतिजिनेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

[अनागततीर्थंकरनामानि]

तीर्थंकृच्च महापद्मः सूरदेवो जिनाधिपः । सुपार्श्वनामधेयोऽन्यो यथार्थश्च स्वयंप्रभुः ॥१॥ सर्वात्मभूत इत्यन्यो देवदेवप्रभोदयः । उदयः प्रश्नकीर्तिश्च जयकीर्तिश्च सुव्रतः ॥२॥ अरश्च पुण्यमूर्तिश्च निष्कषायो जिनेश्वरः । विमलो निर्मलाभिख्यश्चित्रगुप्तो वरः स्मृतः ॥३॥ समाधिगुप्तनामान्यौ स्वयंभूरनिवर्तकः । जयो विमलसंज्ञश्च दिव्यपाद इतीरितः ॥४॥ चरमोऽनंतवीर्योऽमी वीर्यधैर्यादिसद्गुणाः । चतुर्विंशतिसंख्याका भविष्यत्तीर्थकारिणः ॥५॥

ओं ह्रीं अनागतचतुर्विंशतिजिनेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

कम्पिल्लाणयरीमंडणस्स विमलस्स विमलणाणस्स ।
आरत्तिय वरसमये णच्चंति अमररमणीओ ॥

अमररमणीउ णच्चंति जिणमन्दिरं । विविहवर तालतूरहिं सुचंगमपुरं ॥ जडियबहुरयणचामीयरं पत्तयं । जोइयं सुन्दरं जिणप आरत्तियं ॥१॥ रुणभझंकारणवरघचलणुद्दिया । मोतियादाम वच्छच्छले संठिया । गीय गायंति णच्चंति जिणमन्दिरं, जोइयं सुन्दरं० ॥३॥ केशभरिकुसुमपयसरसढोलंतिया । वयण छणइंदसमकंतवियसंतिया । कमलदलणयण जिणवयणपेखंतिया । जोइयं सुन्दरं० ॥४॥ इंदधारिणिंदजक्खेंदवोहंतिया । मिलिव सुर असुर घणरासि खेलंतिया । के वि सियचमर जिणविम्ब ढोलंतिया । जोइयं सुन्दरं० ॥५॥

गाथा—णंदीसुरम्मि दीवे बावण्णजिणालयेसु पडिमाणं ।
अट्ठाहिवरपव्वे इंदो आरत्तियं कुणई ॥६॥

इन्द आरत्तियं कुणइ जिणमन्दिरं, रयणमणिकिरणकमलेहि वरसुन्दरं । गीय गायंति णच्चंति वरणाडियं तूर वज्जंति णाणाविहम्पाडियं ॥७॥

गाथा—एक्केक्कम्मि य जिणहरे चउपड सोलहवा-

वाओ । जोयणलक्खपमाणं अट्ठमे णंदीसुरे दीवे ॥ ८ ॥

अट्ठमं दीवणंदीसुरं भासुरं । चैत्यचैत्यालये वन्दि अमरासुरं । देवदेवोउ जह धम्म संतोसिया, पंचमं गाय गायंति रसपोसिया ॥ ९ ॥

गाथा-दिव्वेहि खीरणीरेहिं गन्धइट्ठाहि कुसुममालाहि ।
सव्वसुरलोयसहिया पुज्जा आरम्भए इंदो ॥१०॥

इन्दसोहम्मिसग्गाववज्जोसयं, आयऊ सज्जि ऐरावयं वरगयं । सव्वदव्वेहिं भव्वेहिं पूजाकरा, मिलिव पडिवक्खया तस्स तिहु देसया ॥ ११ ॥

गाथा-कंसालतालतिवली, झाल्लरभरभेरिवेणुविणाओ ।
वज्जंति भावसहिया भव्वेहिं णउज्जिया सव्वे ॥१२॥

सव्वदव्वेहि भव्वेहि करताडियं, सद्दए संझिगण झिगण-णिद्धडयं । गिझिनिझं झिगिनिझं वज्जये झल्लरी, णच्चये इन्दइन्दायणी सुन्दरी ॥१३॥ णयण कज्जलसलायामग्गं दिण्णयं, हेमहीरालयं कुण्डलं कङ्कणं ॥ झंझणं भङ्करं तंपि ये णेवरं, जिणपआरत्तियं जोइयं सुन्दरं ॥ १४ ॥ दिट्ठिया, सग्गि अङ्गलियदावंतिया, खिणहिं खिण खिणहिं जिण विंब जोइंतिया ॥ णारि णच्चंति गायंति

कोइलसुरं, जिणप आरत्तियं जोइयं सुन्दरं । रुणुभुणं-कारणेवरघकरकङ्कणं, णाइ जंपंति जिणणाहवं वहुगुणं ॥ जुवइ णच्चंति सुमरन्ति ण उ णियघरं, जिणपआरत्तियं जोइयं सुन्दरं ॥ कण्ठकदलीह मणिहार भुल्लंतऊ जिणइ थुई थुई सो णाय सन्तुट्ठऊ । विविहकोऊहलं रयहि णारी-घरं, जिणपआरत्तियं जोइयं सुन्दरं ।

आरत्तिय जोवइ कम्मइ धोवइ, सग्गावग्गा हलहु लहइ ।
जं जं मण भावइ तं सुह पावइ, दीणु विकासु ण भासुणइ ॥

यावंति जिनचैत्यानि, विद्यंते भुवनत्रये ।
तावंति सततं भक्त्या, त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ।

(इत्याशीर्वादः)

षोडशकारणपूजनम्

ऐंद्रं पदं प्राप्य परं प्रमोदं धन्यात्मतामात्मनि मन्यमानः ।
दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेंद्रलक्ष्म्या महाम्यहं षोडशकारणानि॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोशडकारणानि ! अत्रावतरत अवतरत संवौषट् ।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुध्यादिषोशडकारणानि अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् ।

सुवर्णभृंगारविनिर्गताभिः पानीयधाराभिरिमाभिरुच्चैः

दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेंद्रलक्ष्म्या महाम्यहं षोडशकारणानि ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि-विनयसम्पन्नता-शीलव्रतेष्वनतीचारा-भीक्ष्ण ज्ञानोपयोग-संवेगशक्तितस्त्यागतप-साधुसमाधि-वैयावृत्य-करणा-र्हद्भक्ति-बहुश्रुतभक्ति-प्रवचनभक्ति-आवश्यकापरिहाणि-मार्गप्रभावना-प्रवचनवात्सल्येति तीर्थंकरत्वकारणेभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखण्डपिंडोद्भवचन्दनेन, कर्पूरपूरैः सुरभीकृतेन ।

दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेंद्रलक्ष्म्याः० ॥ चंदनम् ।

स्थूलैरखंडैरमलैः सुगंधैः शाल्यक्षतैः सर्वजगन्नमस्यैः ।

दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेन्द्रलक्ष्म्याः० ॥ अक्षतम् ।

गुंजद्द्विरेफैः शतपत्रजातीसत्केतकीचंपकमुख्यपुष्पैः ।

दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेन्द्रलक्ष्म्याः० ॥ पुष्पम् ।

नवीनपक्वान्नविशेषसारैर्नानाप्रकारैश्चरुभिर्वरिष्ठैः ।

दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेन्द्रलक्ष्म्याः० ॥ नैवेद्यम् ।

तेजोमयोल्लासशिखैः प्रदीपैः दीपप्रभैर्ध्वस्ततमो वितानैः ।

दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेन्द्रलक्ष्म्याः० ॥ दीपम् ।

कर्पूरकृष्णागरुचूर्णरूपैर्धूपैर्हुताशाहुतदिव्यगंधैः ।

दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेन्द्रलक्ष्म्याः० ॥ धूपम् ।

सन्नालिकेरक्रमुकाम्रवीजपूगादिभिः सारफलै रसालैः ।
दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेन्द्रलक्ष्म्याः० ॥ फलम् ।
पानीयचंदनरसाक्षतपुष्पभोज्यसद्दीपधूपफलकल्पितमर्घपात्रं
आर्हन्त्यहेत्वमलषोडशकारणानां पूजाविधौ विमलमंगल-
मातनोतु । अर्घम् ।

[प्रत्येकार्घ ।]

यदा यदापन्नासाः स्युराकर्ण्यन्ते तदा तदा ।
मोक्षसौख्यस्य कर्तृणि कारणान्यपि षोडश ॥

[यंत्रोपरिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।]

असत्यसहिता हिंसा मिथ्यात्वं च न दृश्यते ।
अष्टांगं यत्र संयुक्तं दर्शनं तद्विशुद्धये ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

दर्शनज्ञानचारित्रतपसां यत्र गौरवम् ।
मनोवाक्कायसंशुद्ध्या सा ख्याता विनयस्थितिः ।२।

ॐ ह्रीं विनयसंपन्नतायै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अनेकशीलसम्पूर्णं व्रतपञ्चकसंयुतम् ।
पंचविंशतिक्रिया यत्र तच्छीलव्रतमुच्यते ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं निरतिचारशीलव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

काले पाठस्तथा ध्यानं शास्त्रे चिंता गुरौ नुतिः ।

यत्रोपदेशना लोके शास्त्रज्ञानोपयोगिता ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अभीक्ष्णज्ञानोपयोगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

पुत्रमित्रकलत्रेभ्यः संसारविषयार्थतः ।

विरक्तिर्जायते यत्र स संवेगो बुधैः स्मृतः ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं संवेगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जघन्यमध्यमोत्कृष्टपात्रेभ्यो दीयते भृशम् ।

भक्त्या चतुर्विधं दानं सा ख्याता दानसंस्थितिः ॥

ओं ह्रीं शक्तितस्त्यागायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

तपो द्वादशभेदं हि क्रियते मोक्षलिप्सया ।

शक्तितो भक्तितो यत्र भवेत् सा तपसः स्थितिः ॥

ओं ह्रीं शक्तितस्तपसेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

आर्या—मरणोपसर्गरोगादिष्टवियोगादनिष्टसंयोगात् ।

न भयं यत्र प्रविशति, साधुसमाधिः स विज्ञेयः ॥८॥

ओं ह्रीं साधुसमाधयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कुष्टोदरव्यथाशूलैर्वातपित्तशिरोर्तिभिः ।

काशस्वासजरारोगैः पीडिता ये मुनीश्वराः ॥

तेषां भैषज्यमाहारं शुश्रूषा पथ्यमादरात् ।

यत्रैतानि प्रवर्तन्ते वैयावृत्यं तदुच्यते ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं वैयावृत्यकरणायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

मनसा कर्मणा वाचा जिननामाचरद्वयम् ।
सदैव स्मर्यते यत्र सार्हद्भक्तिः प्रकीर्तिता ॥ १० ॥

ओं ह्रीं अर्हद्भक्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

निर्ग्रन्थभुक्तिनो भुक्तिस्तस्य द्वारावलोकनम् ।
तद्भोज्यालाभतो वस्तुरसत्यागोपवासता ॥
तत्पादवन्दनापूजा प्रणामो विनयो नतिः ।
एतानि यत्र जायंते गुरुभक्तिर्मता च सा ॥११॥

ओं ह्रीं आचार्यभक्त्येऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

भवस्मृतिरनेकांतलोकालोकप्रकाशिका ।
प्रोक्ता यत्रार्हता वाणी वर्ण्यते सा बहुश्रुतिः ॥१२॥

ओं ह्रीं बहुश्रुतभक्त्येऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

षट्द्रव्यपञ्चकायत्वं सप्ततत्त्वं नवार्थता ।
कर्मप्रकृतिविच्छेदो यत्र प्रोक्तः स आगमः ॥१३॥

ॐ ह्रीं प्रवचनभक्त्येऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

प्रतिक्रमस्तनूत्सर्गः समता वन्दना स्तुतिः ।
स्वाध्यायः पठ्यते यत्र तदावश्यकमुच्यते ॥१४॥

ॐ ह्रीं आवश्यकापरिहाणयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जिनस्नानं श्रुताख्यानं गीतवाद्यं च नर्तनम् ।
यत्र प्रवर्तते पूजा सा सन्मार्गप्रभावना ॥१५॥

ॐ ह्रीं सन्मार्गप्रभावनायै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

चारित्रगुणयुक्तानां मुनीनां शीलधारिणाम् ।
गौरवं क्रियते यत्र तद्वात्सल्यं च कथ्यते ॥१६॥

ॐ ह्रीं प्रवचनवत्सलत्वायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जयमाला ।

भवभवहि निवारण सोलहकारण पयडमि गुणगणसायरहं ।
पणविवि तित्थंकर असुहखयंकर केवलणाणदिवायरहं ॥१॥

पद्धरी छन्द ।

दिढ धरहु परमदंसण विसुद्धि, मणवयणकायविरइयतिसुद्धि । मा छंडहु विणउ चउ पयार, जो मुत्ति वरांगण हियहि हार ॥२॥ अणुदिणु परिपालउ सोलभेउ, जो हुणि हरइ संसारहेउ । णाणोपजोग जो काल गमइ, तसु तणियकित्ति भुवणयहि भमइ । संवेउ चाउ जे अणुसरंति, वेएण भवण्णउ ते तरंति । जे चउविह दाण सुपत्त देय, ते मोहभूमि सुह मत्थ लेह ॥४॥ जे तव तवंति बारहपयार, ते मम्मासुरंदहविहवसार । जो साधुसमाधि धरंति थक्कु, सो हवइ ण काममुहंधुवक्कु ॥५॥ जो जाणइ वेयावच्चकरण, सो हाइ सव्व दोसाण हरण । जो चिंतइ मण अरिहंत देव, तसु विसय अणंतासवण खेव. ॥६॥ पव्वयणसरिस जे

गुरु णमंति, चउगइसंसार ण ते भमंति । बहुसुतह भत्ति जे णर करंति, अप्पउ ग्यणत्तय ते धरंति ॥७॥ जे छह आवासइ चित्तदेइ, सा सिद्धपंथमहरत्थ लेइ । जे मग्गपहावण आइरंति, ते अहहिंसण संभवंति ॥८॥ जे पवयणकज्जसमत्थ हंति, तहं कम्म जिणंदह खवण भंति । जे वच्छलत्त्छ कारण वहंति, ते तित्थयरत्तउपुह लहंति ॥६॥

जे सोलह कारण कम्मवियारण जे धरंति वयसीलधरा । ते दिवि अमरेसुर पहुमि णरेसुर सिद्धवरंगण हिवहिहरा ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं

एताः षोडश भावना यतिवराः कुर्वंति ये निर्मला,
स्ते वै तीर्थंकरस्य नामपदवीमायुर्लभंते कुलम् ।
चित्रं काञ्चनपर्वतेषु विधिना स्नानार्चनं देवतां,
राज्यं सौख्यमनेकधा वरतपो मोक्षं च सौख्यास्पदम् ॥

(इत्याशीर्वाद)

दशलक्षणपूजनम् ।

उत्तमादिक्षमाद्यंतब्रह्मचर्यसुलक्षणम् ।
स्थापयेद्दशधा धर्ममुत्तमं जिनभाषितम् ॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलाक्षणिकधर्म ! अत्रावतर अवतर संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

(यंत्रं स्थापयामि)

प्रालेयशैलशुचिनिर्गतचारुतोयैः, शीतैः सुगंधिसहितैर्मुनि-चित्ततुल्यैः । संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं, संसारतापहननाय क्षमादियुक्तम् ॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्यधर्मेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचंदनैर्बहलकुंकुमचंद्रमिश्रैः मंत्रासवासितदिशामुखदिव्यसंस्थैः । संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं० ॥ चंदनम् ॥

शालीयशुद्धसरलामलपुण्यपुंजैः स्पर्शैरखंडशशिलक्षणरूपतुल्यैः संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं० ॥ अक्षतम् ॥

मंदारकुंदवकुलोत्पलपारिजातैः पुष्पैः सुगंधसुरभीकृतसर्वलोकैः । संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं० ॥ पुष्पम् ॥

अत्युत्तमैः रसरसादिकसद्यजातैर्नैवेद्यकैश्च परितोषितभव्यलोकैः । संपूजयामिदशलक्षणधर्ममेकं० ॥ नैवेद्यम् ॥

दीपैर्विनाशिततमोत्करुद्धनाशैः कर्पूरवर्तिज्वलितोज्ज्वलभाजनस्थैः । संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तम् । दीपम्

कृष्णागरुप्रभृतिसर्वसुगंधद्रव्यैर्धूपैस्तिरोहितदिशा-मुखदिव्यधूम्रैः । सम्पूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय

क्षमादियुक्तम् । धूपम्

पूगीलवंगकदलीफलनालिकेरैर्हृद्घ्राणनेत्रसुखदैः शिवदानदक्षैः । सम्पूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापदहनाय क्षमादियुक्तम् । फलम् ।

पानीयस्वच्छहरिचन्दनपुष्पसारैः शालीयतंदुलनिवेद्यसुचन्द्रदीपैः । धूपैः फलावलिविनिर्मितपुष्पगंधैः पुष्पांजलीभिरपि धर्ममहं समर्चे ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवा-र्जव-सत्य-शौचसंयमतपस्त्यागाकिंचन्य ब्रह्मचर्यधर्मेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अंगपूजनम्

येन केनापि दुष्टेन पीडितेनापि कुत्रचित् ।
क्षमा त्याज्या न भव्येन स्वर्गमोक्षाभिलाषिणा ॥१॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणे उत्तमक्षमाधर्मांगाय जलं निर्वपामीति स्वाहा । चन्दनं निर्व० । अक्षतान् निर्व० । पुष्पं निर्व० । चरुं निर्व० । दीपं निर्व० । धूपं निर्व० । फलं निर्व० । अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

उत्तमखममद्दउ अज्जउ सच्चउ पुणु सउच्च संजम सुतऊ ।
चाउवि आकिंचणु भवभयवंचणु वंभचेरु धम्मजु अखऊ ।१।

उत्तमखम तिल्लोयहसारी, उत्तमखम जम्मोवहितारी ।
उत्तमखम रयणतयधारी उत्तमखम दुग्गइदुहहारी ॥ २ ॥

उत्तमखम गुणगणसहयारी उत्तमखम मुणिविंदपयारी।
उत्तमखम बुहयण चिंतामणि, उत्तमखम संपज्जइ थिरमणि
॥३॥ उत्तमखम महणिज्ज सयलजणु, उत्तमखम मिच्छत्त
विहंडणु। जह असमत्थह दोसु खमिज्जइ, जहि असम-
त्थह ण वि रूसिज्जइ ॥४॥ जहिं आकोसणवयण सहज्जइ,
जहि परदोस ण जण भासिज्जइ। जह चेयणगुण चित्त
धरिज्जइ, तहिं उत्तमखम जिण कहिज्जइ ॥५॥

घत्ता—उत्तमखमपूया सुरखगणूया केवलणाण लहइ
विथिरू। हुय सिद्धणिरंजण भवदुहभंजणु अगणियरिसि-
पुंगमाजि चिरू ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मृदुत्वं सर्वभूतेषु कार्यं जीवैन सर्वदा।
काठिन्यं त्यज्यते नित्यं धर्मबुद्धिं विजानता ॥२॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणे उत्तममार्दवधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्वपामीति०

मद्दव भवमद्दणु माणणिकंदणु दयधम्म जु मूलहु विमलु।
सव्वह हियहारउ गुणगणसारउ तिस उच्चउ संजम सयलु
॥१॥ मद्दउ माणकषाय विहंडणु, मद्दउ पंचेंदियमण
दंडणु। मद्दउ धम्महकरुणावल्ली, पसरइ चित्तमहीरुह-

वल्ली ॥२॥ मद्दउ जिणवर भत्तिपयासइ, मद्दउ कुगइपसरु णिएणासइ । मद्दवेण बहुविणय पवट्टइ, मद्दवेण जणवइरी हट्टइ ॥३॥ मद्दवेण परिणामविशुद्धी, मद्दवेण विद्दु लोयह सिद्धी । मद्दवेण दोविह तव मोहइ, मद्दवेण तीजो णर मोहइ ॥४॥ मद्दउ जिणमासण जाणिज्जइ, अप्पापर सरूव भाविज्जइ । मद्दउ दोष अमेम णिवारउ, मद्दउ जणणम-मुद्दहतारउ ॥५॥

घत्ता–सम्मदंसण अंगु मद्दउपरिणाम जु मुणहु ।
इय परियाण विचित्त मद्दउ धम्म अमल थुणहु ॥६॥

ओं ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

आर्यत्वं क्रियते सम्यक् दुष्टबुद्धिश्च त्यज्यते ।
पापचिंता न कर्तव्या श्रावकैर्धर्मचिंतकैः ॥३॥

ओं ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्वपामीति स्वाहा

धम्मह वरलक्खणु अज्जउ थिरमणु, दुरियविहंडणु सुहज-णणु । तं इत्थु जि किज्जइ तं पालिज्जइ तं णि सुणिज्जइ खयजणणु ॥१॥ जारिसु णिजयचित्त चिंतिज्जइ, तारिस अएणहु पुण भासिज्जइ । किज्जइ पुण तारिगु सुहसंचणु, तं अज्जवगुण मुणहु अवंचणु ॥२॥ मायामल्ल मणहु णीसारहु, अज्जउ धम्म पवित्त वियारहु । वउ तउ मायावियउ

णिरत्थउ, अज्जउ सिवपुर पंथ सउत्थउ ॥३॥ जत्थ कुटिलपरिणाम चइज्जइ, तहिं अज्जउ धम्मजु संपज्जइ । दंसणणाणसरूप अखंडो, परम अतींदिय सुखकरंडो ॥४॥ अप्पे अप्पउ भवहतरंडो, एरिसु चेयणभावपयंडो । सो पुण अज्जउ धम्मे लब्भइ, अज्जवेण वैरियमन खुब्भइ ॥५॥ अज्जउ परमप्पउ गयसंकप्पउ चिम्मितु सासय अभियपउ । तं णिरुजाइज्जइ, संसउ हिज्जइ पाविज्जइ जिहि अचल-पऊ ॥६॥

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वाह्याभ्यंतरैश्चापि मनोवाक्कायशुद्धिभिः ।
शुचित्वेन सदा भाव्यं पापभीतैः सुश्रावकैः ॥५॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणे उत्तमशौचधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्वपामीति०

सच्चु जि धम्मंगो तं जि अभंगो भिण्णंगो उवओग्गमई । जरमरणविणासणु तिजयपयासणु झाइज्जइ अहिणु जि थुऊ ॥ धम्म सउच्च होइ मणसुद्धिय, धम्म सउच्च वयण धणगिद्धिय । धम्म सउच्च लोह वज्जंतउ, धम्म सउच्च सुतव पहिजंतउ ॥ धम्म सउच्च बंभवयधारणु, धम्म सउच्च मयट्ठणिवारणु ॥ धम्म सउच्च जिणायमभ-णणे, धम्म सउच्च सुगुरु अणुमणणे ॥ धम्म सउच्च

सल्लकयच्चाए, धम्म सउच्च वि णिम्मलभाए । धम्म सउच्च कसाय आहावे, धम्म सउच्च ण लिप्पइ पावें ॥ अहवा जिणवर पूज विहाणे, णिम्मल फासुयजलकय-ण्हाणे । तंपि सउच्च गिहत्थउ भासइ, णवि मुणिवरह कहिउ लोयासिउ ॥

घत्ता—भव मुणि वि अणिच्चो धम्म सउच्च पालिज्जइ एयग्गमणि सिवमग्ग सहाओ सिवपयदाओ अणुमंचिताहि-किंणिखणि ॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

असत्यं सर्वथा त्याज्यं दुष्टवाक्यं च सर्वदा ।
परनिंदा न कर्तव्या भव्येनापि च सर्वदा ॥४॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमसत्यधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्वपामी०

दयधम्महु कारण दोसणिवारण, इहभवपरभव सुक्खयरू । सच्चुजि वयणुल्लउ भुवणिअतुल्लउ, बोलिज्जइ वीसास-यरू ॥ १ ॥ सच्चुजि सव्वह धम्मपहाणु, सच्चु जि महियलगरुवविहाण । सच्चु जि संसारसमुद्दसेउ, सच्चु जि भव्वह मण सुक्खहेउ ॥२॥ सच्चेण जि मोहइमणुव-जम्मु, सच्चेण पवित्तउ पुण्णकम्म । सच्चेण सयल गुणगण संहति सच्चेण तियस सेवा वहंति ॥ ३ ॥

सव्वेण अणुव्वमहव्वयाइ, सच्चेण विणासिय आवयाइ। हिय मिय भासिज्जइ णिच्चभास, ण वि भासिज्जइ परदुहपयास ॥ ४ ॥ परबाहायर भासहु ण भव्व, सच्चु णिखंडउ विगयगव्व। सच्चु जि परमप्पा अत्थि एक्कु, सो भावहु भवतमदलण अवकु ॥ ५ ॥ रुंधिज्जइ मुणिणा वयणगुत्ति, जंखण किज्जइ संसार अत्ति।

घत्ता—सच्चु जि धम्मफलेण केवलणाण वहेइ थणु। तं पालहु भो भव्व! भणहुण अलियउ इह व वयणु ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं सत्यधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

संयमं द्विविधं लोके कथितं मुनिपुंगवैः।
पालनीयं पुनश्चित्ते भव्यजीवेन सर्वदा ॥६॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणे उत्तमसंयमधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्वपामीति०

संजम जणि दुल्लहु, तं पाविल्लहु, जो छंडइ पुण मूढमई। सो भमै भवावलि, जरमरणावलि, किम पावई सुइ पुण सुगई ॥ संजम पंचेंदिय दंडणेण, संजम जि कसाय विहंडणेण। संजम दुद्धर तव धारणेण, संजमरस चाय वियारणेण ॥ संजम उववास वियंभणेण, मणुपसरहु थंभणेण। संजम गुरुकायकलेसणेण, संजम बहुपरिगिहचायणे-

ण ॥ संजम तस थावर रक्खणेण संजम तिणि जोय णियं भणेण । संजमसुतत्थपरिरक्खणेण, संजम बहुगुण सुचयंतणेण ॥ संजम अणुकंपकुणंतणेण, संजम परमत्थवियारणेण । संजम पोसइ दंसण हु अत्थु, संजम तिसहू णिरमोक्खपत्थ ॥ संजम विणुणरभव मयल सुणणु, संजम विणु दुग्गइ जिउपवणणु । संजम विण घडि यम इत्थ जाउ, संजम विण विहली अत्थि आउ ॥

घत्ता—इहभवपरभवसंजमसरणो, होज्जउ जिणणाहें भणिओ । दुग्गइसरसोसण खरकिरणावम जेण भवारि विसम हणिओ ॥

ॐ ह्रीं संयमधर्मांगायघ निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

द्वादशं द्विविधं लोके बाह्याभ्यंतरभेदतः ।

तपः शक्तिप्रमाणेन क्रियते धर्मवेदिभिः ॥७॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणे उत्तमतपोधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्वपामीति०

णरभवपावेप्पिणु तच्च मुणेप्पिणु खण्डवि पंचेदियममणु । णिव्वेउवि मण्डिवि संगइ छण्डवि तव किज्जइ जाये विवणु ॥१॥ तं तउ जहि परिगह छण्डिज्जइ, तं तउ जहि मयणु जि खण्डिज्जइ । तं तउ जहि णग्गत्तणु दीसइ, तं तउ जहि गिरिकन्दर णिवसइ ॥२॥ तं तउ

जहि उवसग्ग सहिज्जइ, तं तउ जहि रायाइ जिणिज्जइ । तं तउ जहि भिक्खइ भुंजिज्जइ, सावयगेह कालणिविस-ज्जइ ॥३॥ तं तउ जत्थ समिदिपरिपालणु, तं तउ गुत्ति-त्तयहणिहालणु । तं तउ जहि अप्पापर बुज्झिउ, तं तउ जहि भव माणुजि उज्झिउ ॥ तं तउ जहि ससरूव मुणि-ज्जइ, तं तउ जहि कम्महगण खिज्जइ । तं तउ जहि सुरभत्तिपयासहि, पवयणत्थ भवियणह पभासहि ॥४॥ जेण तवे केवल उपवज्जइ, सासय सुक्ख णिच्च संपज्जइ ॥

घत्ता—बारहविहु तउवरु दुग्गइ परिहरु, तं पूजिज्जइ थिर-मणिणा । मच्छरमय छण्डिवि करणइ दण्डिवि तं णि-धरज्जइ गोरविणा ।

ओं ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

चतुर्विधाय संघाय दानं चैव चतुर्विधम् ।
दातव्यं सर्वथा सद्भिश्चितकैः पारलौकिकैः ॥८॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणे उत्तमत्यागधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्वपामीति०

चाउ विं धम्मंगो करहु अभङ्गो णियसत्तिइ भत्तिय जणहु । पत्तह सुपवित्तह तवगुणजुत्तह परगइसंवलु तं हुणहु ॥१॥ चाए आवागवणउ हट्टइ, चाए णिम्मल कित्ति पवट्टइ । चाए वयरिय पणमिह पाए, चाए, भोग भूमि सुह

जाए ॥२॥ चाउ विणिज्जइ णिच्च जि विणए, सुयवयणे भासेप्पिणु पणए। अभयदाण दिज्जइ पहिलारउ, जिमि णासइ परभवदुहयारउ॥ सत्थदाण बीजो पुण किज्जइ, णिम्मल णाण जेण पाविज्जइ। ओसह दिज्जइ रोयविणासणु, कह वि ण पित्थई वाहिपयासणु॥ आहारे धणरिद्धि पविट्ठइ, चउविह चाउ जि एहु पविट्ठइ, अहवा दुट्ठ वियप्पह चाए चउ जिए हु मुणाहु समवाए॥५॥

घत्ता—दुहियहि दिज्जइ दाण, किज्जइ माणु जि गुणियणहिं। दयभावयी अभंग, दंसण चिंतिज्जइ मणहं॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्विंशतिसंख्यातो यो परिग्रह ईरितः।
तस्य संख्या प्रकर्तव्या तृष्णारहितचेतसा ॥८॥

ॐ ह्रीं परपरब्रह्मणे उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्व०॥

आकिंचणु भावहु अप्पा ज्झावहु देहभिण्णउज्झाणमऊ। निरुवम गयवण्णउ सुहसंपण्णउ, परम अतींदिय विगयभउ॥ आकिंचणु चउसंगह णिवित्ति, आकिंचणु चउसुज्झाणसत्ति। आकिंचणु वउवियलियममत्ति, आकिंचणु रयणत्तयपवित्त। आकिंचणु आउ चिएहिचित्त, पसरंतउ इंदियवणिविचित्त। आकिंचणु देहहणेहचित्त, आकिंचणु

जे भवसुह विरत्त । तिणमत्त परिग्गह जत्थ णत्थि, मणि-
णाउ विहिज्जइ तव अवत्थि । अप्पापर जत्थ वियार-
रसत्ति, पयडिज्जइ जहि परमेट्ठिभत्ति ॥ जह छंडिज्जइ
संकप्पदुट्ठ, भोयण वंछिज्जइ जह अणिट्ठ । आकिंचण
धम्म जि एम होइ, तं ज्झाइज्जइ णरु इत्थलोइ ॥
घत्ता—ए हुज्जि पहावे, लद्धसहावे तित्थेसर सिवनयरिगया ।
ते पुण रिसिसारा मयणवियारा वंदणिज्ज एतेण सया ॥
ओं ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नवधा सर्वदा पाल्यं शीलसंतोषधारिभिः ।
भेदाभेदेन संयुक्तं मद्गुरूणां प्रसादतः ॥ १० ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्वपा० ॥
बंभव्वउ दुद्धरु धारिज्जइ वरु केडिज्जइ विसयासणिरु ।
तियसुक्खयरत्तो मणकरिमत्तो तं जि भव्व रक्खेहु थिरु ॥
चित्तभूमि मयणु जि उपवज्जइ, तेण जु पीडउ करइ
अकज्जइ । तियह सरीरइ णिंदह सेवइ, णिय परणारि ण
मूढउ वेवइ । णिवडइ णिरय महादुह भुंजइ, जो हीणुजि
बंभव्वउ भंजइ ॥ इय जाणविणु मणवयकाए, बंभचेरु
पालहु अणुराए । णवपयार सत्थिय सुहयारउ, बंभव्वे
विणुवउनउजिअसारउ । बंभव्व विणु काय किलेसइ,

विहल सयल भासीय जिणेसइ । बाहिर फरसेंदिय-सुहरक्खउ, परमबंभ अब्भितर पिक्खउ ॥ एण उवाए लब्भइ सिवहरु, इम रइधू बहुभणइ विणयधरु ॥

घत्ता ।

जिणणाइ महिज्जइ, मुणि पणविज्जइ, दहलक्खण पालीइणिरु । भो खेमसियासुय भव्व विणयजुय होलिवम्म यहु करहु थिरु ॥

ओं ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

[समुच्चय आरती]

इय काऊण णिज्जरं जे हणंति भवपिंजरं । नीरोयं अजरामरं ते लहंति सुक्खं परं ॥ १ ॥ जेण मोक्ख फल तं पाविज्जइ, सो धम्मंगा एहहु णिज्जइ । खमखमायलु तुंगय देहउ मद्दउ पल्लउ अज्जउ सेहउ ॥ सच्च सउच्च मूल संजमदलु, दुविह महातव णवकुसुमाउलु । चउविह चाउय साहियपरमलु, पीणियभव्वलोयछप्पइयलु ॥ दियसंदोह सद्द कलकलयलु । सुरणरखरखेयर सुहसयफलु । दीणाणाह दोह सम णिग्गह, सुद्ध सोम तणुमित्तपरिग्गहु ॥ बंभचेरु छायइ सुहासिउ, रायहंसनियरेहि समासिउ । एहहु धम्मरुक्ख लाखिज्जइ, जीवदया ययणहि राखिज्जइ ॥

झाणड्ढाणा भल्लाणउ किज्जइ, मिच्छामई पवेम ण दिज्जइ । मीलसलिलधारहि मिंचिज्जइ, एम पयत्तण वड्ढारिज्जइ ॥

घत्ता—कोहानल चुक्कउ, होउ गुरुक्कउ, जाइ णिमिदिय मिट्ठगई । जगताइ सुहंकरु धम्ममहातरु देइ फलाइ सुमिट्ठमई ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मेभ्योऽर्घं निर्वपामीतिस्वाहा

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

रत्नत्रयपूजनम्

श्रीमंतं सन्मतिं नत्वा श्रीमतः सुगुरूनपि ।
श्रीमदागमतः शश्वत् कुर्वे रत्नत्रयार्चनम् ॥ १ ॥
अनंतानंतसंसारकर्मसंबंधविच्छिदे ।
नमस्तस्मै नमस्तस्मै जिनाय परमात्मने ॥ २ ॥
ध्रौव्योत्पादव्ययानेकतत्त्वसंदर्शनत्विषे ।
नमस्तस्मै नमस्तस्मै जिनाय परमात्मने ।
संसारार्णवमग्नानां यः समुद्धर्तुमीश्वरः ।
लोकालोकप्रकाशात्मा यश्च तन्यम्यं महः ।
येन ध्यानाग्निना दग्धं कर्मकक्षमलक्षणाम् ।

येनात्मात्मनि विज्ञातः परं परमिदं वपुः ।
य एवं परमं ज्योतिर्यः सुब्रह्ममयः पुमान् ।
सर्वानंदमयो नित्यं सर्वसत्त्वहितंकरः ।
नमस्तस्मै नमस्तस्मै जिनाय परमात्मने ।
इत्याद्यनेकधास्तोत्रैः स्तुत्वा सज्जिनपुंगवम् ।
कुर्वे दृग्बोधचारित्रार्चनं संक्षेपतोऽधुना ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूपरत्नत्रय ! अत्रावतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

संसारदुःखज्वलनात्रगूढप्रगूढसंतापमलोपशांत्यै ।
सद्दर्शनज्ञानचरित्रपंक्त्यै जलस्य धारां पुरतो ददामि ।

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्दर्शनाय ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय, ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

रत्नत्रयं भूषितभव्यलोकमशोकमंतर्गतभावगम्यम् ।
काश्मीरकर्पूरसुचन्दनाद्यैः सुगंधगंधैरहमर्चयामि ॥चन्दनम् ॥

अक्षतैरक्षतपुञ्जैः शालीयैः शुद्धगंधिभिः शुद्धैः ।
दर्शनबोधचरित्रं त्रितयं तत्संयजे भक्त्या ॥ अक्षतम् ॥

विकसितकुसुमशतपत्रसुजातिसमूहशोभया । घनकर्पूरनीरशुभचन्दनचर्चितचारुगंधया ॥ अलिकुल रणितकलितम-

धुरध्वनिश्यामसमूहरसालया । सकलितमातनोमि रत्नत्रय-

मत्र पवित्रमालया ॥ पुष्पम् ॥

प्रसिद्धसद्द्रव्यमनन्यलभ्यं वचोगुरूणामिव साधुसिद्धम् ।

सुदृष्टिसद्बोधचरित्ररत्न-त्रयाय नैवेद्यमहं ददामि ॥नैवेद्यम्॥

दीपैः सुकर्पूरपरागभृंगै रंगद्भिरंगद्युतिदीप्यमानैः ।

सद्दर्शनज्ञानचरित्ररत्न–त्रयं त्रिधावाप्तिकरं यजेऽहम् ॥दीपम्॥

धूपैः कालागरुभिः त्रिशुद्धिसंशुद्धकर्मसंधूपैः ।

दर्शनज्ञानचरित्रत्रितयं संधूपयामि संसिद्ध्यै ॥ धूपम् ॥

पूगैरनर्घ्यैर्वरनालिकेरैर्नारिंगजंवीरकपित्थपुंजैः ।

रत्नत्रयं तर्पितभव्यलोकं, शक्यावलोकं तदहं यजामि

॥ फलम् ॥

जलगंधाक्षतपुष्पैश्चरुदीपैर्धूपसत्फलैः सर्वैः ।

दर्शनबोद्धचरित्रं त्रितयं त्रेधा यजामहे भक्त्या ॥ अर्घ्यम् ।

मोहाद्रिसंकटतटीविकटप्रपात–संपादिने सकलसत्त्वहितंकराय

रत्नत्रयाय शुभहेतिसमप्रभाय पुष्पांजलिं प्रविमलां ह्यवता-

रयामि ॥

(पुष्पांजलिं क्षिपामि)

जलगंधकुसुममिश्रं, फलतन्दुलकलितललिताढ्यम् ।

सम्यक्त्वाय सुभव्यो भव्यां कुसुमांजलिं दद्यात् ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्व० ॥
मोहाद्रिसंकटतटोविकटप्रपातसंपादिने सकलसत्त्वहितंकराय ।
बोधाय शक्रशुभहेतिसमप्रभाय पुष्पांजलिं प्रविमलां ह्यवतारयामि ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्बोधतत्त्वायाघ निर्वपामीति स्वाहा ।
कर्माणि हि महारोगा नश्यंति यत्प्रयोगतः ।
सच्चारित्रौषधायास्मै ददामि कुसुमांजलिम् ॥
ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय इदं जलं सुगन्धं अक्षतं पुष्पं नैवेद्यं दीपं धूपं फलं अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

[समुच्चय जयमाल]

रयणत्तयसारउ भव्वपियारउ सयलहं जीवह दुरियहरो । मुणियणगणमहियउ गुणगणसहियउ मिच्छमोह मयणासहरी ॥१। पणवीस दोसवज्जिउ पवित्तु, अइयाररहिउ वसुगुणविजुत्त । अट्ठंगइ णिम्मल विप्फुरंति, जो तिरहं देवत्तण विलिंति ॥ नारई यवि तित्थयरा हवंति, देव वि एइंदिय पउ लहंति । जे मिच्छत्तय सम्मत्तहीण, दालिद्दय णासिय ते घणीण ॥ ३ ॥ मइसुयअवही मणपज्जणाण, केवलु वि कहिज्जइ मइपवाण । अण्णाणे तिण्ण भण्णाइं

जोइ, कुच्छियमिच्छत्तजईस होइ ॥ ४ ॥ वोमुत्र णिम्मल पवणु वि असंग, परिश्रजिउ विकणायमुत्तिसंग । लोयालो-हावि जयउ णियोई, बहुभेय जउ चारित्त होइ ॥ ५ ॥ पंचाइमहव्वय समिदि पंच, गुत्तणाउ तिण्णिपयजियअवंच । पुण पंचायार तिभेयजुत्त, मुणिधम्मकहहि देविंदवुत्त ॥६॥

घत्ता—जिहिं तिण्ण वि णरचिरु गहणावणे मुइ अन्धउ आलस्सउ पंगुलवि । जिनवग्भासिय तिण्ण तरइ विणु मुत्ति ण भणइ गणि ॥

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

विद्यमानविंशतिजिनपूजनम्

पूर्वापरविदेहेषु विद्यमानजिनेश्वरान् ।
संस्थापयाम्यहमत्र शुद्धसम्यक्त्वहेतवे ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहस्थविद्यमानविंशतिजिनतीर्थंकर समूह ! अत्र अवतरावतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

कर्पूरवासितजलैर्भृतहेमभृङ्गै धारां ददामि गदजन्मजरादि-हान्यै । तीर्थङ्करं सुजिनविंशतिविद्यमानं समर्चयामि भव-कल्मषशान्तिहेतोः ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहस्थविद्यमानविंशतिजिनतीर्थंकर समूहाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

काश्मीरचन्दनविलेपितपद्मयुग्मं संसारतापहरमर्चितमिन्द्र-मुख्यैः । तीर्थङ्करं सुजिनविंशतिविद्यमानं सञ्चर्चयामि भवक-ल्मषशान्तिहेतोः ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहस्थ ... चन्दन निर्व० स्वाहा ।

शाल्यक्षतैःशरदचन्द्रसमानशुभ्रै -रक्षयपदस्यसुखसम्पदवाप्तु - कामः । तीर्थङ्करं सुजिनविंशतिविद्यमानं सञ्चर्चयामि भव-कल्मषशान्तिहेतोः ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहस्थ ... अक्षतम् निर्व० स्वाहा ।

अम्भोजचम्पकसुगन्धिसुपारिजातैः कामस्य ध्वंसनकृते भवभीतस्वान्तः । तीर्थङ्करं सुजिनविंशतिविद्यमानं सञ्चर्च-यामि भवकल्मषशान्तिहेतोः ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहस्थ········ ····पुष्पं निर्व० स्वाहा ।

नैवेद्यकैःशुचितरैर्घृतपक्वखण्डैर्मिष्टैर्मनोहरतरैर्गदनाशकामः । तीर्थङ्करं सुजिनविंशति विद्यमानं सञ्चर्चयामि भवकल्मष-शान्तिहेतोः ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहस्थ ·· ·· नैवेद्यं निर्व० स्वाहा ।

दीपैःकनत्कनकभाजनसुव्यवस्थैः स्वात्मीयमोहतिमिरक्षयवा-ञ्छयाऽहम् । तीर्थङ्करं सुजिनविंशतिविद्यमानं सञ्चर्चयामि भवकल्मषशान्तिहेतोः ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धि विदेहस्थ .... दीपं निर्व० स्वाहा ।

कर्पूरखण्डमलयागरुचन्दनानां धूपैः सुगन्धिकृतसर्वदिगन्तरालैः । तीर्थङ्करं सुजिनविंशतिविद्यमानं सञ्चर्चयामि भवकल्मषशान्तिहेतोः ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहस्थ ....धूपं निर्व० स्वाहा ।

नारिङ्गदाडिममनोहरश्रीफलाद्यैर्माधुर्यमोहनतया नयनाभिरामैः तीर्थङ्करं सुजिनविंशतिविद्यमानं सञ्चर्चयामि भवकल्मषशान्तिहेतोः ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहस्थ......... ...फलं निर्व० स्वाहा ।

सद्वारिचन्दनशुभाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपशुभधूपफलैस्समर्घैः ॥ तीर्थङ्करं सुजिनविंशतिविद्यमानं सञ्चर्चयामि भवकल्मषशान्तिहेतोः ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहस्थ..... ... फलं निर्व० स्वाहा ।

श्रीमन्धरजिनं नौमि लोकालोकप्रकाशकम् ।
तत्पादाब्जयुगं चर्चे शुद्धसम्यक्त्वहेतवे ॥
साकेतमण्डनस्वामी देवदेवेन्द्रवन्दितः ।
युग्मन्धरजिनाधीशस्तं सदा पूजये मुदा ॥
विदेहे पश्चिमाशास्थं विजयार्द्धगिरेः प्रभुम् ।
स्वामिनं बाहुनामानं चर्चयामि जगद्गुरुम् ॥

अनन्तसद्गुणाधीशं सुबाहुं चर्चयन्ति ये ।
तैर्भव्यैर्लभते सौख्यं चिन्तयद्भिः जिनेश्वरम् ॥
धातकीखण्डमन्मध्ये संजातप्रभुस्वयंबुधम् ।
संपूजयाम्यहमत्र देवदेवशिरोमणिम् ॥
स्वयंप्रभं प्रभाक्रान्तत्रैलोक्यं जिनपाधिपम् ।
नमामि सततं भक्त्या सम्यक्त्वस्य विशुद्धये ॥
वृषभाननजिनं नौमि वृषभस्य प्रवर्तकम् ।
येन प्रकाशितं तत्त्वं भव्यसत्त्वसुखावहम् ॥
अनन्तदर्शनज्ञानं अनन्तसुखसागरम् ।
अनन्तवीर्यं वंदे ऽहं अनन्तगुणहेतवे ॥
सूर्यप्रभं प्रभाक्रान्तभामण्डलविराजितम् ।
रविकोटिप्रभां जित्वा पूजयामि सदा प्रभुम् ॥
विश्वविघ्नविनाशाय विश्वज्ञानप्रकाशकम् ।
पूजयेऽहं विशालाख्यं विशालज्ञानशालिनम् ॥
वज्रंधरधराधीशं पूजयामि सदा मुदा ।
कर्मशत्रु हंतो येन एकाग्रध्यानवज्रतः ॥
चन्दाननमहं वन्दे चन्द्रलेखायते प्रभुः ।
ज्ञानामृतस्य दातारं भव्यानन्तसुखप्रदम् ॥

पुष्करार्धसुदीपेषु भद्रबाहुर्विराजते ।
पूजयामि सदा भक्त्या भव्यानां सुखदायकम् ॥
केवलज्ञानबोधाय नमामि श्रीभुजङ्गमम् ।
दत्तावलम्बनं येन संसारार्णवतारणे ॥
ईश्वरं जिनमर्हंतं पूजयन्तः सुरासुराः ।
आत्मबोधिं सदाकालं लभन्ते नाऽत्रसंशयः ॥
नेमिप्रभजिनं नौमि नेमिं धर्मरथस्य हि ।
देवविद्याधराधीशैश्चर्चितं चरणद्वयम् ॥
वीरवीरं महावीरं वीरसेनं महाप्रभऽम् ।
पूजयामि सुभावेन वीरं वीर्यपराक्रमम् ॥
महाभद्रो महावीरो स्वात्मसुखसुधांनिधिः ।
केवलज्ञानसम्पन्नस्तस्य वन्दे पदक्रमम् ॥
यशोधरं जिनं नौमि यशस्केवलकेवलधारिणम् ।
संसारसागरे ब्रुडितान् यः पारयति प्राणिनः ॥
अजितवीर्येण वीर्येण जित्वा मोहमहारिपुम् ।
कैवल्यश्री समाश्रीता तस्य वन्दे पदक्रमम् ॥

ओं ह्रीं सीमन्धरादि अजितवीर्यान्तेभ्यो पञ्चमेर सम्बन्धिविदेह-स्थविद्यमानविंशतिजिनेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

[जयमाला]

श्रीविंशतिजिनवर ! नमितसुरासुर ! चक्रेश्वरपूजितचरण !
जय ज्ञानदिवाकर ! गुणरत्नाकर ! सेवितनाशितविघ्नघन !

[पद्धडीवृत्तम्]

श्रीविंशतिजिनवरविद्यमान ! प्रणमामि पञ्चशतधनुष्मान !
भो भव्यकमलप्रतिबोधसूर्य ! त्वं विहर विदेहे हरितध्वान्त !
श्रीमंधर ! नौमि सुजिनवरेन्द्र ! युग्मन्धर ! पूजितपदखगेन्द्र !
जम्बूविदेहतः शिवगतेश ! स्वामिन्नमामि बाहो ! जिनेश !
प्रणमाम्यहमत्र सुबाहुचरण ! गुणगणपूरित ! दुख-दुरितहरण !
सञ्जात ! स्वयंप्रभ ! जिन ! जयन्तु वृषभानन ! वृषभमपारयन्तु
हेऽनन्तवीर्य ! शौरीप्रभेश ! वन्दामि विशाल ! सदा जिनेश
भो वज्रंधर ! धारितसुवज्र ! दारित-दुखशैल ! नमितसुभद्र !
चन्द्रानन ! अष्टमदेव ! धीर ! प्रणमामि तीर्णभवसिन्धुनीर !
भद्रबाहुजिनप ! हुतकर्मकाष्ठ ! भूजङ्गम ! ईश्वर ! जगन्नाथ !
नेमीश्वर ! नौमि सुवीरसेन ! महाभद्र ! जनान् कुरु सह सुखेन
हे देव यशोधर ! त्वा महामि भो अजितवीर्य ! शतधा नमामि

घत्ता ।

श्रीविंशतिजिनवर ! प्रणतसुरासुर ! विद्यमान ! प्रणमामि सदा

अर्चनया नशितं दुरितसमूहं भक्ति सदा तव शिवसुखदा !

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतिजिनतीर्थंकरेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा

श्रीज्येष्ठजिनवरपूजनम्

[स्थापन]

नाभिरायकुलमंडन मरुदेवीउरभयनं ।
प्रथमतीर्थंकर गाऊं स्वामी आदि जिनंदं ।।
ज्येष्ठ जिनेन्द्र न्हवाऊं सुरज उग्रभयं ।
सुवरन कलश जु लाऊं क्षीर समुद्रभरनं ।।
जुगला धरमनिवारन स्वामी आदि जिनं ।
संसारसागरतारन मेसे सुरगहितं ।। ज्येष्ठ० सुव० ।।
गणधर ऋषिवर यतिवर मुनिवर ध्यान धरं ।
आरजकाश्रावकश्राविका पूजतचरणवरं ।।ज्येष्ठ० । सुव०।।

ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठजिनाधिपते अत्रावतरावतर संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ अत्र मम संन्निहितो भव भव वषट् पुष्पांजलि क्षिपामि ।

[अष्टक]

निर्मल शीतल सुगंध उदकहं पूजरयं ।
कर्म मलय बहु टारिय आतम निर्मलयं ।।ज्येष्ठ० सुव०।।

ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठ जिनाधिपतये जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति ।

केशर चन्दन करपूर विलंयन पूजरयं ।
सुगन्धशरीर लहिकर आतम निर्मलयं ॥ज्येष्ठ० सुव०॥
ॐ ह्री श्री ज्येष्ठजिनाधिपतये संसारतापविनाशाय चन्दनं निर्वपा०
मुक्ताफल जिम उज्ज्वल अक्षत पूजरयं ।
सुगंधशरीर लहिकर आतम निर्मलयं ॥ज्येष्ठ० सुव०॥
ॐ ह्री श्री ज्येष्ठजिनाधिपतयेऽक्षयपदप्राप्तायाक्षतं निर्वपा० ।
जाई जूई मचकुन्द सेवती पूजरयं ।
कामवान विनाशन आतम निर्मलयं ॥ज्येष्ठ० । सुव०॥
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठजिनाधिपतये कामवाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपा० ।
उत्तम अन्न बहु आनी पकवान पूजरयं ।
वेदना कर्म विनाशन आतम निर्मलयं ॥ज्येष्ठ० । सुव०॥
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठजिनाधिपतये क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपा०
करपूरतनी बहु जोत हु आरत्ति पूजरयं ।
केवलज्ञान लहीकर आतम निर्मलयं ॥ज्येष्ठ० । सुव०॥
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठजिनाधिपतये मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपा० ।
अगर लोहवान कृष्णागर धूप सु पूजरयं ।
अष्ट कर्म प्रजाले आतम निर्मलयं ॥ज्येष्ठ० । सुव०॥
ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठ जिनाधिपतयेऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपा० ।
आम्र नींबू जंबीर नालिकेर पूजरयं ।

मनवांछित फल पामिय आतम निर्मलयं ॥ज्येष्ठ० सुव०॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठश्रीजिनाधिपतये मोक्षमहाफलप्राप्तये फलं निर्वपा०

धवल मंगलगीत महोछव अर्घा पूजरयं।

मोक्षसौख्य पदपामिय आतम निर्मलगं ॥ज्येष्ठ० सुव०॥

ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठजिनाधिपतये अनर्घ्यपदप्राप्तयेऽर्घ निर्व० ॥९॥

सकल कीर्ति गुरु प्रणमिय जिनवर पूजरयं।

ब्रह्म भनें जिनदास सु आतम निर्मलयं ॥ज्येष्ठ०। सुव०॥

ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठजिनाधिपतयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०॥

जय-माला (चौपाई)

अमर परस मनपरी अयोध्या, नाभि नरेन्द्र वसैं निजवुध्या। सुरपति मेर शिखर ले धरया, कनक कलश क्षीरोदधि भरिया ॥१॥ पट रानी मरुदेवी माया, जगपति आदि जिनेश्वर जाया ॥ सुर० ॥ २ ॥ जेठ मास अभिषेक जु करिया, अष्टोत्तर शत कुम्भ जु धरिया ॥ सुर० ॥ ३ ॥ झमकत जलधारा संचरिया, ललित कलोल धरन उत्तरिया ॥ सुर० ॥ ४ ॥ जय जय कार सुरन उच्चारिया, इन्द्र इन्द्राणी सिंहासन धरिया ॥ सुर० ॥ ५ ॥ अंग अनंग विभूषण वढ़िया, कुण्डल हार हरिय मनि जड़िया ॥ सुर० ॥ ६ ॥ ऋषभनाथ सुत नाम सु सहिया, कँवल नयन

कमलापति कहिया ॥ सुर० ॥ ७ ॥ जुगलाधरमनिवारन वरिया, सुर-नर निकर गंधोदक सरिया ॥ सुर० ॥ ८ ॥ रतनकचोल कुमारन भरिया, जिन चरनांबुज पूजत हरिया ॥ सुर० ॥ ९ ॥ हिमहि मासचंदन घन रसिया, भूरि सुगंध परमल परि सरिया । सुर० ॥ १० ॥ अक्षत अक्षत वास लहरिया, रोहनकान्त किरन सम सिरिया ॥ सुर० ॥ ११ ॥ देखत रुचिकर अमरन करिया, पंच मुष्टि जिन आगे धरिया ॥ सुर० ॥ १२ ॥ सुन्दर पार जात मोग-रिया, कमल बकुल पाटल कुमुदरिया ॥ सुर० ॥ १३ ॥ चरुवर दीप लिये अब सरिया, जिन वर आगे धरि उत्तरिया ॥ सुर० ॥ १४ ॥ अगर लोहवान धूप फल फलिया, फल सुरसाल मधुर रस भरिया ॥ सुर० ॥ १५ ॥ कुसमांजलि सांजुलि समुजलिया, पंडित राज अभिषेक जु करिया ॥ सुर० ॥ १६ ॥ त्रिभुवन कीर्ति पदकंज वरिया, भूषण रतन महोच्छव करिया ॥ सुर० ॥ १७ । जै जै कार करि उच्चरिया, ब्रह्मकृष्ण जिन राज स्तविया ॥ सुर० ॥ १८ ॥

श्लोक——आदिनाथजिनेन्द्रस्य लोकालोकावलोकिनः ।

पाद-पद्मञ्जयुगं भक्त्या, त्रिपरीत्य नमाम्यहम् ॥
ओं ह्रीं श्री जेष्ठजिनाधिपतये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

शांतिपाठस्तुतिः

(शांतिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते रहें)

[दोधकवृत्तम्]

शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् ।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तमम्बुजनेत्रम् ॥ १ ॥
पंचमभीप्सितचक्रधराणां पूजितमिंद्रनरेन्द्रगणैश्च ।
शांतिकरं गणशांतिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥२॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिः दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मंडलतेजः ॥ ३ ॥
तं जगदर्चितशांतिजिनेंद्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुंडलहाररत्नैः शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः । ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास् तीर्थंकराः सततशान्तिकरा भवंतु ॥ ५ ॥

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यांतु नाशम् ।
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके,
जैनेंद्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतः शांतिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ८ ॥

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

[इष्टप्रार्थना]

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः
सद्वृत्तानां गुणगणकथादोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे
संपद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेंद्र ! तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः ॥ १० ॥

अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं ।
तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु ॥ ११ ॥

दुःक्खखओ कम्मखओ, समाहिमरणं च बोहिलाहो य ।
मम होउ जगतबान्धव तव, जिणवर चरणसरणेण ॥१२॥

[प्रार्थना]

त्रिभुवनगुरो ! जिनेश्वर ! परमानन्दैककारण ! कुरुष्व । मयि किंकरेऽत्र करुणा यथा तथा जायते मुक्तिः ॥ १३ ॥ निर्विण्णोऽहं नितरामर्हन् बहुदुःखया भवस्थित्या । अपुनर्भवाय भवहर ! कुरु करुणामत्र मयि दीने ॥१४॥ उद्धर मां पतितमतो विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्वा । अर्हन्नलमुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि ॥ १५ ॥ त्वं कारुणिकः-स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाऽहम् । मोहरिपुदलितमानं फूत्करणं तव पुरः कुर्वे ॥ १६ ॥ ग्रामपतेरपि करुणा परेण केनाप्युपद्रुते पुंसि । जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहते ॥ १७ ॥ अपहर मम जन्म दयां, कृत्वैत्येकवचसि वक्तव्यम् । तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव प्रलापित्वम् ॥ १८ ॥ तव जिनवर चरणाब्जयुगं करुणामृतशीतलं यावत् । संसारतापतप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥ १९ ॥ जगदेकशरण ! भगवन् ! नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौघ ! किं बहुना कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥ २०

(पुष्पांजलिं क्षिपामि)

विसर्जनपाठः

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ! ॥ १ ॥
आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनम् ।
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ! ॥ २ ॥
मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ! ॥ ३ ॥
आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमम् ।
ते मयाऽभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यांतु यथास्थितिम् ॥ ४ ॥

(पुष्पांजलि क्षिपामि)

देवशास्त्रगुरुकी भाषा पूजा

[अडिल्ल छन्द]

प्रथम देव अरहन्त सुश्रुतसिद्धांतजू ।
गुरु निरग्रन्थ हान मुकतिपुरपन्थजू ॥
तीन रतन जगमांहि इन्हें नित ध्यावहूँ ।
जिनकी भक्तिप्रसाद परम पद पावहूँ ॥१॥

दोहा—पूजों पद अरहन्तके, पूजों गुरुपद सार ।
पूजों देवी सरस्वती, नितप्रति अष्ट प्रकार ॥२॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

[हरि गीतिका]

सुरपति-उरग-नरनाथ तिनकर, बन्दनीक सुपद-प्रभा।
अति शोभनीक सुवरण उज्ज्वल, देख छवि मोहित सभा॥
वर नीर क्षीरसमुद्र घट भरि, अग्र तसु बहुविधि नचूं।
अरिहन्त, श्रुत सिद्धांत, गुरु निर्ग्रन्थ, नित पूजा रचूं॥१॥
दोहा—मलिन वस्तु हर लेत सब, जलस्वभाव मलछीन।
जासों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन॥ १ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जे त्रिजग उदरमझार प्राणी, तपत अति दुद्धर खरे।
तिन अहितहरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे॥
तसु भ्रमरलोभित घ्राण पावन, सरस चंदन घसि सचूं।
अरिहंत, श्रुत सिद्धांत, गुरु निरग्रन्थ, नित पूजा रचूं॥२॥
दोहा—चंदन शीतलता करै, तपनवस्तु परवीन।
जासों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन॥ २ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपा०

यह भवसमुद्र अपार तारण, के निमित्त सुविधि ठई।

अति दृढ परम पावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही ॥
उज्ज्वल अखंडित सालि तंदुल-पुंज धरि त्रय गुण जचूं ।
अरिहंत, श्रुत सिद्धांत, गुरु निरग्रन्थ, नित पूजा रचूं ॥३॥
दोहा—तंदुल सालि सुगंधि अति परम अखंडित बीन ।
जासों पूजों परम पद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति ॥४॥
जे विनयवंत सुभव्यउर अंबुजप्रकाशन भान हैं ।
जे एक मुख चारित्र भाषित, त्रिजगमांहि प्रधान हैं ॥
लहि कुन्दकमलादिक पहुप भव भव कुवेदनसों बचूं ।
अरिहंत, श्रुत सिद्धांत, गुरु निरग्रन्थ, नित पूजा रचूं ॥४॥
दोहा—विविध भांति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन ।
जासों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपा० ॥४॥
अति सबल मद कंदर्प जाको, क्षुधा-उरग अमान है ।
दुस्सह भयानक तासु नाशनको सु गरुडसमान है ॥
उत्तम छहों रसयुक्त नित नैवेद्य करि घृतमें पचूं ।
अरिहंत, श्रुत सिद्धान्त, गुरु निरग्रन्थ नितपूजा, रचूं ॥
दोहा—नानाविध संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन ।
जासों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय चरुं निर्वपा० ॥५॥

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने मोह-तिमिर महाबली।
तिहिकर्मघाती ज्ञानदीपप्रकाशजोति प्रभावली॥
इह भांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूं।
अरिहंत, श्रुत सिद्धांत, गुरु निरग्रन्थ नितपूजा रचूं॥

दोहा—स्वपरप्रकाशक जोति अति, दीपक तमकरि हीन।
जासों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन॥ ६॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्व० ॥६॥

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै।
वर धूप तासु सुगंधि ताकरि, सकल परिमलता हँसै॥
इह भांति धूप चढाय नित, भवज्वलनमाहीं नहिं पचूं।
अरिहंत, श्रुत सिद्धांत, गुरु निरग्रंथ नितपूजा रचूं॥ ७॥

दोहा—अग्निमांहि परिमल दहन, चन्दनादि गुणलीन।
जासों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु-तीन॥ ७॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपा० ॥ ७॥

लोचन सुरसना घ्रान उर, उत्साहके करतार हैं।
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फल गुणसार हैं।
सो फल चढावत अर्थ पूरन, परम अमृतरस सचूं।
अरिहंत, श्रुत सिद्धांत, गुरु निरग्रन्थ, नितपूजा रचूं॥ ८॥

दोहा—जे प्रधान फल फलविषैं, पंचकरण-रसलीन।
जासों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व० स्वाहा ॥८॥

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं।
वर धूप निरमल फल विविध, बहुजनमके पातक हरूं ॥
इहभांति अर्घ चढाय नित भवि, करत शिवपंकति मचूं।
अरिहंत, श्रुत सिद्धांत, गुरु निरग्रन्थ, नितपूजा रचूं ॥९॥

दोहा- वसुविधि अर्घ संजोयकैं, अति उछाह मन कीन।
जासों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति० ।

[जयमाला]

देव-शास्त्र-गुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार।
भिन्न-भिन्न कहु आरती, अल्प सुगुण विस्तार ॥

[पद्धरी छन्द]

चउकर्म रु त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादशदोष-राशि। जे परम सुगुण हैं अनन्त धीर, कहवतके छयालिस गुण गंभीर ॥ २ ॥ शुभ समवसरणशोभा अपार, शत इन्द्र नमत कर सीस धार। देवाधिदेव अरिहंतदेव, वंदों मन-वच-तन करि सुसेव ॥ ३ ॥ जिनकी

धुनि है ओंकाररूप, निरअक्षरमय महिमा अनूप । दश अष्ट महाभाषा समेत, लघुभाषा सात शतक सुचेत ॥४॥ सो स्याद्‌वादमय सप्तभंग, गणधर गूंथे बारह सु अंग । रवि शशि न हरैं सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहु प्रीति ल्याय ॥ ५ ॥ गुरु आचारज उवझाय साध, तन नगन रत्नत्रयनिधि अगाध । १ संसारदेह-वैराग धार, निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥ ६ ॥ गुण छत्तिस पच्चिस आठबीस, भवतारनतरन जिहाज ईस । गुरुकी महिमा वरनो न जाय, गुरुनाम जपों मन-वचन-काय ॥७॥

सोरठा—कीजै शक्तिप्रमान, शक्ति विना सरधा धरै ।
'द्यानत' सरधावान, अजर अमरपद भोगवै ॥८॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री बीसतीर्थंकर पूजा भाषा ।

दीप अढाई मेरु पन, अब तीर्थंकर बीस ।
तिन सबकी पूजा करूं, मनवचतन धरि सीस ॥ १ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्कराः ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः अत्र मम सन्निहिताः भवत भवत वषट् ।

इंद्रफणींद्रनरेंद्र,-वंद्य पद निर्मलधारी । शोभनीक संसार,

सार गुण हैं अविकारी ।। चीरोदधिसम नीरसों (हो), पूजों तृषा निवार । सीमन्धर जिन आदि दे, स्वामी बीस विदेहमंझार ।। श्रीजिनराज हो, भव तारणतरण-जिहाज श्री महाराज हो ।। १ ।।

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं-निर्वपामीति स्वाहा ।।

तीन लोकके जीव, पाप अताप सताये । तिनकों साता दाता, शीतल वचन सुहाये ।। बावन चन्दनसों जजूं (हो,) भ्रमन-तपन निरवार ।। सीमं० ।। २ ।।

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो भवतापविनाशनाय चंदनं०

यह संसार अपार, महासागर जिनस्वामी, तातैं तारे बड़ीभक्ति-नौका जगनामी ।। तंदुल अमल सुगंधसों (हो,) पूजों तुम गुणसार ।। सीमं० ।। ३ ।।

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०

भविक-सरोज-विकाश, निंद्यतमहर रविसे हो । जति श्रावक-आचार, कथनको तुमहिं बडे हो ।। फूलसुवास अनेकसौं (हो), पूजों मदनप्रहार । सीमं० ।। ४ ।।

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं०

काम-नाग-विषधाम—नाशको, गरुड कहे हो । क्षुधा-

महादवज्वाल, तासुको मेघ लहे हो ॥ नेवज बहु घृत मिष्टसों (हो), पूजों भूख विडार । सीमं० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नै०वे

उद्यम होन न देत, सर्व जगमाहि भर्यो है । मोह महा-तम घोर, नाश परकाश कर्यो है ॥ पूजों दीप-प्रकाशसों (हो,) ज्ञानज्योतिकरतार । सीमं० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं

कर्म आठ सब काठ,—भार विस्तार निहारा । ध्यान-अगनिकर प्रगट सर्व कीनो निर्वारा ॥ धूप अनूपम खेवतें (हो), दु:ख जलैं निरधार । सीमं० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्व० ।

मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे हैं । सबको छिनमें जीत जैनके मेर खरे हैं । फल अति उत्तमसों जजों (हो), वांछितफलदातार । सीमं० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व० ।

जल फल आठों दरव, अर्घ कर प्रीत धरी है । गणधर इन्द्रनिहूतैं, थुति पूरी न करी है ॥ 'द्यानत सेवक जानके (हो), जगतैं लेहु निकार । सीमं० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व० ।

[जयमाला आरती]

सोरठा—ज्ञान-सुधाकर चंद, भविक-खेतहित-मेघ हो।
भ्रमतमभान अमंद, तीर्थंकर बीसों नमों ॥१॥

[चौपाई]

सीमंधर सीमंधर स्वामी। जुगमन्धर जुगमन्धर नामी। बाहु बाहु जिन जगजन तारे। करम सुबाहु बाहुबल धारे ॥ १ ॥ जात सुजात केवलज्ञानं। स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं। ऋषभानन ऋषिभानन्दोषं। अनंत वीरज वीरजकोषं ॥२॥ सौरीप्रभ सौरीगुणमालं। सुगुण विशाल विशाल दयालं। वज्रधार भवगिरिवज्जर हैं। चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं ॥३॥ भद्रबाहु भद्रनिके करता। श्री भुजंगभुजंगम भरता। ईश्वर सबके ईश्वर छाजैं। नेमिप्रभू जस नेमि विराजैं ॥४॥ वीरसेन वीरं जग जानै। महाभद्र महाभद्र बखानै। नमों जसोधर जसधरकारी। नमों अजितवीरज बलधारी ॥५॥ धनुष पांचसै काय विराजै। आयु कोडिपूरव सब छाजै। समवसरण सोभित जिनराजा। भवजलतारन तरन जिहाजा ॥६॥ सम्यक् रत्नत्रयनिधिदानी। लोकालोकप्रकाशक ज्ञानी। शत इन्द्रनिकरि बन्दित सोहैं। सुरनर पशु सबके मन मोहैं ॥ ७ ॥

दोहा—तुमको पूजैं वंदना, करैं धन्य नर सोय।

'द्यानत' सरधा मन धरें, सो भी धरमी होय ॥८॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय चौबीसजिन-पूजा।

(कविवर वृन्दावनजी कृत)

छंद कवित्त।

वृषभ-अजित-संभव-अभिनंदन, सुमति-पदम-सुपास जिनराय। चन्द-पुहुप-शीतल-श्रेयांस जिन, वासुपूज पूजित सुरराय ॥ विमल अनंत धरम जसउज्जल, शांति कुंथु-अर-मल्लि मनाय। मुनिसुव्रत-नमि-नेमि-पास प्रभु, वर्द्धमानपद पुष्प चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र अवतर अवतर०, अत्र तिष्ठः तिष्ठ ठःठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

मुनि-मनसम उज्जल नीर, प्रासुक गन्ध भरा।
भरि कनक-कटोरी धीर, दीनी धार धरा ॥
चौबीसों श्रीजिनचन्द, आनंद-कंद सही।
पदजजत हरत भवफंद, पावत मोच्छ-मही ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०

गोशीर कपूर मिलाय, केशर रंग भरी।

जिनचरनन देत चढ़ाय, भव आताप हरी ॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपा०

तंदुल सित सोम-समान, सुन्दर अनियारे ।

मुकताफलकी उनहार, पुंज धरौं प्यारे ॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति

वरकंज कदंब कुरंड, सुमन सुगन्ध भरे ।

जिन अग्र धरों गुनमंड, काम कलंक हरे ॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व०

मनमोदनमोदक आदि, सुन्दर सद्य बने ।

रसपूरित प्रासुक स्वाद, जजत क्षुधादि हने ॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपा०

तमखंडन दीप जगाय, धारों तुम आगे ।

सब तिमिरमोह नश जाय, ज्ञानकला जागे ॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं०

दशगन्ध हुताशन मांहि, हे प्रभु खेवत हों ।

मिस धूम्र करम जरि जांहि तुमपद सेवत हों ॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति०

शुचि पक्व सरस फल सार, सब ऋतुके ल्यायो ।

देखत दृगमनको प्यार, पूजतसुख पायो ॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरांतेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०

जल-फल आठों शुचिसार, ताको-अर्घ करों।
तुमको अरपों भवतार, भव तरि मोक्ष वरों ॥
चौवीसौं श्रीजिनचन्द, आनदकन्द सही।
पदजजत हरत भवफंद, पावत मोक्ष मही ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतित्तीर्थकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं०

[जयमाला]

श्रीमत तीरथनाथपद, माथ नाय हितहेत।
गाऊं गुणमाला अबै, अजर अमर पद देत ॥१॥

जय भव-तम-भंजन जन-मन-कंजन; रंजन दिनमणि स्वच्छ-करा। शिवमग-परकाशक, अरिगण-नाशक चौवीसौं जिन-राज वरा ॥ १ ॥

[पद्धड़ी छन्द]

जय रिषभदेव रिषिगन नमंत। जय अजित जीत वसुअरि तुरन्त ॥ जय संभव भवभय करत चूर। जय अभिनन्दन आनन्दपूर ॥२॥ जय सुमति सुमतिदायक दयाल। जय पद्म पद्म दुति तनरसाल। जय जय सुपास भवपासनाश। जय चन्द चन्ददुति तनप्रकाश ॥ ४ ॥ जय पुष्पदंत दुति-दंत सेत। जय शीतल शीतलगुणनिकेत। जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज। जय वासवपूजित वासुपुज्ज ॥ ५ ॥ जय

विमल विमलपद देनहार । जय जय अनंत गुणगण अपार ।
जय धर्म धर्म शिव शर्म देत । जय शांति शांतिपुष्टी करेत
॥६॥ जय कुंथु कुंथुवादिक रखेय । जय अर जिन वसु-
अरि छय करेय ॥ जय मल्लिमल्ल हतमोहमल्ल । जय
मुनिव्रत व्रतशल्लदल्ल ॥७॥ जय नमि नित वासवनुत
सपेम । जय नेमिनाथ वृषचक्रनेम । जय पारस नाथ
अनाथनाथ । जय वर्द्धमान शिवनगरसाथ ॥८॥

चौबीस जिनन्दा आनन्दकन्दा, पापनिकन्दा सुखकारी ।
तिनपदजुगचन्दा उदय अमन्दा, वासववन्दा हितकारी ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीमि स्वाहा

भुक्ति मुक्ति दातार, चौबीसों जिनराजवर !
तिनपद मन-वचधार, जो पूजै सो शिव लहै ॥ १ ॥

(इत्याशीर्वादः)

श्री वर्द्धमान जिनपूजा

[छन्द मत्तगयंद]

श्रीमत वीर हरैं भवपीर भरैं सुखसीर अनाकुलताई ।
केहरिअंक, अरीकरदंक नये हरिपंकतिमौलि सुआई ॥
मैं तुमको इत थापतुहौं प्रभु भक्तिसमेत हिये हरखाई ।
हे करुणाधनधारक देव इहां अब तिष्ठहु शीघ्रहु आई ॥

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

[छन्द अष्टपदी]

क्षीरोदधिसम शुचिनीर, कंचनभृंग भरों।
प्रभु ! वेग हरो भवपीर, यातैं धार धरों॥
श्रीवीर महा अतिवीर, सन्मतिनायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मतिदायक हो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

मलयागिरि चंदन सार, केसर संग घसा।
प्रभु भव-आताप- निवार पूजत हिय हुलसा॥ श्रीवीर०

ओं ह्रीं महावीर जिनेन्द्राय संसारनाय चन्दन नि०

तंदुलसित शशिसम शुद्ध, लीनों थार भरी।
तसु पुंज धरों अविरुद्ध पावों शिवनगरी॥ श्रीवीर०

ओं ह्रीं महावीर जिनेद्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि०

सुरतरुके सुमन समेत, सुमन सुमनप्यारे। सो मन-मथभंजनहेत, पूजों पद थारे॥ श्रीवीर० । (पुष्पं)

रसरज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी। पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी॥ श्रीवीर० (नैवेद्यं)

तमखंडित मंडितनेह, दीपक जोवत हो। तुम पदतर

हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हों ॥ श्रीवीर० । (दीपं)
हरिचंदन अगर कपूर चूर सुगंध करा । तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरा ॥ श्रीवीर० । (धूपं)
रितुफल कलवर्जित लाय, कंचन-थार भरा । शिवफलहित हे जिनराय, तुमढिग भेंट धरा । श्रीवीर० (फलं)
जल-फल वसु सजि हिमथार, तनमन मोद धरों । गुण गाऊं भवदधितार, पूजत पाप हरों । श्रीवीर० (अर्घं)

[पंचकल्याणक]

(राग टप्पाचाल)

मोहि राखो हो सरना, श्रीवर्द्धमानजिनराजजी, मोहि राखो० ॥ गरभ साढसित छट्ठ लियो तिथि, त्रिशला उर अघ हरना । सुर सुरपति तितसेव कर्यो नित, मैं पूजों भवतरना ॥ मोहि० ॥ १ ॥

ओं ह्रीं आषाढशुक्लषष्ठया गर्भमंगलमण्डिताय श्रीमहावीरजि०

जनम चैतसित तेरसके दिन, कुंडलपुर कनवरना । सुरगिर सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजों भवहरना । मोहि०

ओं ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीमहावीरजि०

मगसिर असित मनोहर दसमी, ता दिन तप आचरना । नृपकुमारघर पारन कीनो, मैं पूजों तुम चरना ॥ मोहि० ॥३॥

ओं ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीमहावीरजि०

शुकलदसैं वैसाखदिवस अरि, घात चतुक छय करना।
केवल लहि भवि भवसर तारे, जजौं चरन सुख भरना॥
मोहि०।४।

ओं ह्रीं वैसाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीमहावीर०

कातिक श्याम अमावस शिवतिय, पावापुरतैं वरना।
गनफनिवृंद जजैं तित बहुविधि, मैं पूजों भवहरना॥
मोहि० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीमहावीर०

[जयमाला]

(छन्द हरिगीता २८ मात्रा)

गनधर असनिधर चक्रधर, हरधर गदाधर वरवदा।
अरु चापधर विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा॥
दुख-हरन आनंद-भरन तारन-तरन चरन रसाल है।
सुकुमाल गुन-मनि-माल उन्नत भालकी जयमाल है।१।

[छन्द तोटक।]

जय त्रिशलानंदन, हरिकृतवंदन, जगदानंदन चंदवरं।
भवताप-निकंदन,तनकन-मंदन,रहितसपंद-नयनधरं॥२॥

[घत्तानंद।]

जय केवलभानुकलासदनं। भविकोकविकाशनकंदवनं।

जगजीत महारिपु मोहहरं । रजज्ञानदृगांबर चूरकरं ॥ १ ॥ गर्भादिकमंगलमंडित हो । दुख दारिदको नित खंडित हो । ॥ जगमांहि तुम्ही सत पंडित हो । तुमही भवभाव-विहंडित हो ॥ २ ॥ हरिवंश-सरोजनको रवि हो । बलवंत महंत तुम्हीं कवि हो ॥ लहि केवल धर्मप्रकाश कियौ । अबलौं सोइ मारग, राजति यौ ॥ ३ ॥ पुनि आप तने गुनमांहि सही । सुर मग्न रहैं जितने सबही ॥ तिनकी वनिता गुन गावत हैं । लय माननिसों मनभावत हैं ॥ ४ ॥ पुनि नाचत रंग उमंग भरी । तुअ भक्तिविषैं पग येम धरी ॥ झननं झननं झननं झननं । सुरलेत तहां तननं तननं ॥ ५ ॥ घननं घननं घनघंट बजे । दृमदं दृमदं मिरदंग सजे ॥ गगनांगन गर्भगता सुगता । ततता ततता अतता वितता ॥ ६ ॥ धृगतां धृगतां गत बाजत हैं । सुरताल रसाल जु छाजत हैं ॥ सननं सननं सननं नभमें । इकरूप अनेक जु धारि भमें ॥ ७ ॥ कइ नारि सु वीन बजावति हैं । तुमरा जस उज्जल गावति हैं ॥ करताल विषैं करताल धरें । सुरताल विशाल जु नाद करें ॥ ८ ॥ इन आदि अनेक उछाह भरी । सुरभक्ति करें प्रभुजी तुमरी । तुम ही जग-जीवनिके

पितु हो। तुमही विनकारनतैं हितु हो ॥ ९ ॥ तुमही सब विघ्न-विनाशन हो। तुम ही निज आनंद भासन हो। तुमही चितचिंतितदायक हो। जगमांहि तुम्हीं सब लायक हो। १०। तुमरे पनमंगलमांहि सही। जिय उत्तम पुन्न लियो सबही ॥ हमको तुमरी सरनागत है। तुमरे गुनमें मन पागत है। ११। प्रभु मोहिय और सदा बसिये। जबलौं वसुकर्म नहीं नसिये ॥ तबलौं तुम ध्यान हिये वरतौ। तबलौं श्रुतचिंतन चित्त रतौ। १२। तबलौं व्रत चारित चाहतु हों। तबलों शुभ भाव सुगाहतु हों। तबलों सतसंगति निच रहौ। तबलों मम संजम चित्त गहौ। १३। जबलौं नहिं नाश करों अरिको। शिवनारि वरों समता धरिको ॥ यह द्यो तबलों हमको जिनजी। हम जाचतु हैं इतनी सुनजी। १४।

[घत्तानंद]

श्रीवीरजिनेशा, नमितसुरेशा, नागनरेशा भगति भरा।
'वृन्दावन' ध्यावै, विघन नशावै वांछित पावै शर्म वरा।१५।

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

दोहा—श्रीसन्मतिके जुगलपद, जो पूजै धरि प्रीत।
'वृन्दावन' सो चतुर नर, लहै मुक्ति-नवनीत।१६।

(इत्याशीर्वादः)



श्रेयोमार्ग

होगी

जा

सम्बन्धनरूप सू।